अगस्त 2026

दादावाणी

Retail Price ₹ 20

इस दुनिया में 'मैं गलत हूँ', ऐसा कौन कहेगा? जो बिल्कुल सही है, वही कहेगा। बाकी तो सब अन्डरग्राउन्ड (छिपाकर), गुप्त ही रखते हैं! अपने दोष बताने में, कहने में क्या हर्ज़ है? ओपन टू स्काई (खुला) कर दो न!

आत्मज्ञानी पूज्यश्री दीपकभाई का ब्राज़ील - यू.एस.ए. सत्संग प्रवास जून - जुलाई 2026

ब्राज़ील : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 25 से 28 जून 2026

फीनिक्स (कैलिफ़ोर्निया) : सत्संग : ता. 30 जून से 2 जुलाई 2026

वर्ष : 21 अंक : 10
अखंड क्रमांक : 250
अगस्त 2026
पृष्ठ - 28

Editor : Dimple Mehta
© 2026
Dada Bhagwan Foundation
All Rights Reserved.
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Multiprint
Opp. H B Kapadiya New High School, At-Chhatral, Tal: Kalol,
Dist. Gandhinagar - 382729

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421
संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सिटी,
अहमदाबाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज,**
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : 9328661166-77
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
+91 8155007500
सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
3 साल
भारत : 700 रुपये
वार्षिक
भारत : 240 रुपये
भारत में D.D./M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

'अपनी भूलें खुली करना' वह अंतिम डेवेलपमेन्ट

संपादकीय

ज्ञानी पुरुष परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) का ज्ञान से पहले का जीवन एक सामान्य व्यक्ति जैसा ही था। उनके जीवन में हुए प्रसंग भी सामान्य व्यक्ति के जीवन में होते हैं, वैसे ही थे। उनसे भी जीवन में कई भूलें हुई थी। लेकिन उनकी यह विशेषता थी कि एक बार भूल समझ में आने के बाद उस पर मनोमंथन करके, निष्कर्ष निकालकर, अपनी भूलें खुली की, उन भूलों में से बाहर निकल गए और हमें भी ऐसी भूलों में से निकलने की सरल चाबियाँ देते हैं।

प्रस्तुत अंक में, दादाश्री के व्यापार में उनकी खुद की ज़रा भी इच्छा न होने के बावजूद इस काल के प्रभाव से कुछ सालों तक गलती से कालाबाज़ार में घुस गए और स्लिप होकर बहुत पैसे कमाए। परंतु उपादान इतना उच्च था जिससे कि बाद में वह काला धन दु:खदायी लगने लगा। रोम-रोम में काटने लगा। और उसके बाद स्ट्रोंग भावना की, कि यह काला धन जल्दी चला जाए तो अच्छा। कॉन्ट्रैक्ट के व्यापार में भी लोगों का देखकर उल्टा सीखकर दूसरों के साथ स्पर्धा में आकर सरकारी मकानों के चुनाई के काम में सरकार का सिमेन्ट, स्टील कम डालते थे। बाद में भीतर समझ में आया कि गवर्नमेन्ट के साहब आते हैं तो अंदर घबराहट तो होती ही है, अत: इसमें अपनी कुछ तो भूल है! इसलिए इसे चोरी ही कहेंगे। फिर निष्कर्ष निकाला कि 'यह तो मैं सरकार की नहीं, स्वयं की ही चोरी कर रहा हूँ। अपने आपको ही धोखा दे रहा हूँ।'

दादाश्री स्वयं इतने अधिक जाग्रत थे कि उन्होंने पता लगाया कि 'इतना अधिक मैं धर्म का वाचन करता हूँ फिर भी व्यापार में चोरी बंद नहीं होती, इसलिए इससे भी आगे कुछ और होना चाहिए।' 1951 में सारी चोरियाँ और भ्रष्टाचार बंद हो जाने के बाद, अपनी सारी भूलों के पश्चाताप करने के बाद 1958 में उन्हें आत्मज्ञान हुआ। आत्मज्ञान होने के बाद 'ए.एम.पटेल' के प्रति पक्षपात नहीं रहा। पहले व्यापार में कालाबाज़ारी की थी, झगड़े हुए थे, कोर्ट में गए थे, नुकसान हुआ था, चोरियाँ की थी, भ्रष्टाचार हुआ, ऐसी सारी बातें महात्माओं के सामने अपना सबकुछ जैसा है वैसा ही खुला कर दिया। वे कहते हैं कि इस काल में हम जैसे ज्ञानी से भी चोरियाँ हुई थीं तो फिर दूसरे लोगों का तो क्या सामर्थ्य है? मैं अपना खुला करके, आपको हिम्मत देकर आपका खुला करना सिखा रहा हूँ।

दादाश्री कहते हैं कि भगवान को पहचानना है तो गुप्त काम नहीं करने चाहिए। जो गुप्त काम करते हैं, उन्हें सुधारने के लिए क्या करना है? गुप्त रखा हुआ सबकुछ खुला करना चाहिए, वही अंतिम डेवेलपमेन्ट है। आप भी अपनी भूलें खुली करके, प्रतिक्रमण करके, हल्के होकर, भय मुक्त हो जाओ। यह खुला करने से हमारी लौकिक इज्जत चली गई, ऐसा भले ही लगे, लेकिन ज्ञान के अलौकिक ऐश्वर्य का अपार अनुभव हुआ था। ऐसी दशा महात्माओं भी अनुभव करके मोक्षमार्ग में आगे बढ़ने का पुरुषार्थ करें, यही हृदयपूर्वक अभ्यर्थना।

जय सच्चिदानंद

'अपनी भूलें खुली करना' वह अंतिम डेवेलपमेन्ट

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

लोगों को शांति रहे ऐसे जवाब

प्रश्नकर्ता : दादा, आपके जीवन का एक छोटा सा प्रसंग मैंने पढ़ा और उससे मैं प्रभावित हुआ, वह आपको बताऊँ?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : एक ही पुस्तक हाथ में आई थी और एक प्रसंग उसमें पढ़ा था। उससे मुझे लगा कि दादा के पास तो जाना ही चाहिए। उसमें ऐसा था कि व्यापार के बारे में पूछने दो लोग आए थे। एक ने पूछा, 'कितना नुकसान हुआ? पचास-पचहत्तर हजार?' तो दादा ने कहा, कि 'एक लाख'। दूसरे ने पूछा कि, 'एक लाख'? तो कहा कि, 'नहीं, पचास हज़ार।' तब मुझे लगा कि यह रास्ता अच्छा है। क्योंकि मैं अभी तक ऐसा ही समझा था, कि मुझसे कोई द्वेष न करे और मैं किसी पर द्वेष न करूँ, ऐसी मेरी स्थिति भगवान मुझे प्रदान करें। परंतु उसमें तो सामने वाले को खुश करने की बात की है!

नीरू माँ : हाँ, अच्छी है वह बात! आप्तवाणी सात में है।

प्रश्नकर्ता : आपको व्यापार में नुकसान हुआ था। उस समय जो आपके विरोधी थे, उन्होंने आकर पूछा कि 'भाई, कैसा है, कितना नुकसान हुआ है?' तो उसे आनंद हो जाए इसलिए आपने कहा, 'एक लाख रुपये'।

दादाश्री : हाँ, इससे उसे बहुत आनंद हो जाए न! वह पूछने आया था। उसका हेतु क्या था, कि इन लोगों को ज़्यादा नुकसान हुआ हो तो अच्छा है। तब हमें नुकसान तो कम हुआ था, परंतु मैंने उसे ज़्यादा बताया, तो उसे बहुत आनंद हो गया बेचारे को! मुझसे कहता है, 'परंतु शांति रखना'। मैंने कहा, 'मैं शांति रखूँगा, लेकिन आप बैठकर चाय पीओगे तो मुझे शांति रहेगी।' तो फिर उसे चाय पिलाई। खुश हो जाए न, कि बहुत अच्छा हुआ। अब चलो, इसके यहाँ पार्टी बैठने की (नुकसान होने की) तैयारी है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, तो वह राजी (खुश) होता है।

दादाश्री : जब पार्टी बैठती है तब मजा आता है इसीलिए पता लगाने आया था!

सभी को खुश करके भेजते

प्रश्नकर्ता : दादा, थोड़ा विस्तारपूर्वक बताइए न, क्या हुआ था?

दादाश्री : हमें कंपनी में नुकसान हुआ था इसलिए व्यापार थोड़ा मंदा हो गया था न, तब बड़ौदा जाते तो लोग पूछते थे, 'बहुत नुकसान हुआ है?' तब मैंने कहा, 'कितना लगता है आपको?' तो कहते हैं, 'लाख रुपये का नुकसान हुआ लगता है!' मैंने कहा, 'तीन लाख रुपये का नुकसान हुआ।' अब हमें आधा लाख या पौने लाख का नुकसान हुआ था और मैंने उसे तीन लाख का बताया था। क्योंकि वह व्यक्ति पता करने आया था, वह क्या पता करने आया है, मैं जानता था, कि यदि इसे मैं तीन लाख का कहूँगा

तो खुश रहेगा और बेचारे को घर जाकर खाना अच्छा लगेगा। इसलिए मैंने कहा, कि 'तीन लाख का नुकसान हुआ।' ताकि उसको संतोष हो जाए बेचारे को, घर जाकर खाना खाए अच्छी तरह! उसे कुछ भी राग-द्वेष होंगे तभी तो आया होगा।

और फिर दूसरा कोई *लागणी* (लगाव) वाला व्यक्ति आया था न, उसने पूछा 'बहुत नुकसान हुआ है?' तब मैंने कहा, 'नहीं, पचास हज़ार रुपये का नुकसान हुआ है, परंतु अभी अचानक एक लाख रुपये का फायदा हुआ!' ताकि उसे शांति हो जाए। यानी वह भी खुश हो जाए और घर जाने पर उसे शांति रहे। *लागणी* वाला व्यक्ति और दूसरा, दो प्रकार के लोग आएँगे। दोनों को खुश करके भेजा आराम से।

मैंने उस व्यक्ति से कहा, 'भाई, तीन लाख का हुआ है।' उससे तो वह व्यक्ति बहुत खुश हो गया, तब मैंने उसे कहा, 'चाय-वाय पीकर जाओ।' तब कहता है, 'मुझे ज़रा काम है।' परंतु उसे आनंद आ गया न, अब चाय-वाय सब आ गयी। खुराक मिल गई उसे। यह द्वेष है न, द्वेष! इसी प्रकार यह स्पर्धा ऐसी चीज़ है कि स्पर्धा में चाहे सो कर बैठे व्यक्ति। स्पर्धा! 'मुझसे आगे बढ़ गए हैं? अब पीछे गिर गए, गिरना ही चाहिए।' पीछे गिराने के प्रयत्न करता रहता है। इसलिए मैं ऐसा साफ ही कह देता था न, 'ज़्यादा नुकसान हुआ है, भाई।' देखो, उसे आराम से खाना अच्छा लगा और इसे भी अच्छा लगा। अपने यहाँ क्या नुकसान होगा? अपना जो नुकसान हुआ है, वह हुआ है, उसकी हमें परेशानी नहीं है। लेकिन लोगों को '(वास्तविकता) क्या है' इसके जवाब तो देने पड़ते हैं न! उस व्यक्ति से कहें कि, 'कुछ नुकसान नहीं हुआ।' तो वह ज़्यादा खोज लाता फिर, कि यह तो मना कर रहे हैं! अरे भाई, मना नहीं कर रहा, स्वीकार कर रहा हूँ। तीन गुना कहा तो है। जिसने तुम्हें बताया है, उसे पूछकर आना। शायद पता न हो, कि ज़्यादा मात्रा में हुआ है।

फिर से आया तब मुझसे कहता है, 'अब व्यापार-रोजगार आपको बंद करना पड़ेगा क्या?' मैंने कहा, 'नहीं, यह तो सात लाख की मिल्कियत थी, उसमें से तीन लाख कम हो गए।' वह फिर शांत हो गया, 'यह तो कुछ नए प्रकार का बोले।' 'घन चक्कर, मेरा मुकाबला कहाँ कर पाएगा तू? मैं ज्ञानी पुरुष, तू कहाँ मेरा मुकाबला कर पाएगा? यों तो तुम्हें दुःख भी नहीं दूँगा, परंतु तू इस तरह स्पर्धा में नासमझी करें, वह नहीं करने दूँगा।' अरे, बिना मतलब के पीछे घूमता रहता है!

चिंताओं को टालकर आगे बढ़ना

अब राग वाला (व्यक्ति) हो उसे मैं समझ जाता हूँ कि यह *लागणी* वाला है। उससे कहता, कि 'बैठो, मैं आपको समझाता हूँ। इस तरह वास्तविकता है।' ऐसा समझा देता था। जबकि वह व्यक्ति जिसे अनुकूल नहीं आता था, उसे कह देता था कि 'ज़्यादा नुकसान हुआ।' ताकि वह आराम से घर जाकर अच्छे से खाना खाए। 'अब मंदी में है, इनकी कंपनी बंद हो जाएगी दो साल में', ऐसी आशा होती है उसे। तो ऐसे सब नुस्खे करते रहते थे।

प्रश्नकर्ता : ऐसे नुस्खे करते-करते ही आपको ज्ञान प्रकट हो गया, ऐसा मुझे लगता है।

दादाश्री : बिना कारण क्यों ये सब छिपाते रहना (ढाँकते रहना)? जितनी चिंताएँ होती थीं उन्हें इस तरह से टालकर आगे बढ़ जाते थे। हम व्यापार करते थे तब बहुत चिंताएँ हुई थीं, ज्ञान से पहले। तभी तो यह ज्ञान प्रकट हुआ न!

सुखी करने के लिए प्रैक्टिकल नुस्खे

प्रश्नकर्ता : जब यह *लागणी* वाला व्यक्ति

और वह ऑपोजिट वाला (विरोधी) व्यक्ति, वे दोनों मिलें और बात करें कि 'दादा ने तो मुझे ऐसा कहा।' विरोधी व्यक्ति कहे कि, 'मुझे तो तीन लाख का नुकसान बताया।' और *लागणी* वाला व्यक्ति कहे कि, 'मुझे तो पचास हज़ार का नुकसान बताया।'

दादाश्री : तो वह पचास हज़ार वाला समझ जाएगा।

प्रश्नकर्ता : नहीं, तो विरोधी व्यक्ति को आपके लिए क्या इम्प्रेशन (प्रभाव) पड़ेगी?

दादाश्री : उस व्यक्ति पर इम्प्रेशन पड़ेगी कि 'मैं ही ऐसा हूँ, इसलिए ऐसा कुछ किया होगा। कुछ तो गड़बड़ी की इन्होंने।' वह समझ जाएगा। अब खुद आराम से घर जाकर प्रसाद बनाकर अच्छे से खा और सो जा। आराम से नींद तो आ जाएगी, प्रसाद लेने से। अब यह पार्टी टूटने लगी, उसकी बहुत भावना थी न, ऐसा ही हुआ।

प्रश्नकर्ता : तो वह जो विरोधी व्यक्ति था, उसे आप झूठ बोले, ऐसा नहीं लगेगा?

दादाश्री : लगेगा न!

प्रश्नकर्ता : तो फिर वह क्या मानेगा? तो उस पर क्या इम्प्रेशन पड़ेगी आपके लिए?

दादाश्री : वह झूठ करने ही आया था न! झूठ से झूठ का भाग लगा दिया तो सच हो गया। टू (दो) नेगेटिव, पॉजिटिव नहीं होते?

प्रश्नकर्ता : ऐसा नहीं, परंतु अब वह सीधा व्यक्ति था *लागणी* वाला, उसे भी लगेगा कि 'ऐसा झूठ बोले?'

दादाश्री : वह समझ जाएगा, दादा ने कहा है वह सही है। वह सचमुच में सही मानता था और यह विरोधी भी सही मानता था। उसकी जो इच्छा थी उस अनुसार हुआ, इसलिए फिर एकदम से भूल गया वह। लेकिन गहराई तक नहीं जाना है।

प्रश्नकर्ता : यानी पर्पस (उद्देश्य) तो उसे दुःख नहीं देना था। मेरी अपनी ऐसी मान्यता थी कि अपने लिए किसी को द्वेष हो, ऐसा नहीं करना है और हमें किसी के प्रति द्वेष नहीं करना है।

दादाश्री : सही है।

प्रश्नकर्ता : परंतु आपने तो इससे भी आगे की बात की, कि सभी को खुश करके भेजो।

दादाश्री : हाँ। तो उसे सुख होगा। ऐसा है न, मेरे दुःख-सुख को वह बदल सकें, ऐसा नहीं है, तो फिर मैं दूसरों को क्यों परेशान करूँ?

ऐसा है न, यह तो अब 'मेरे जैसा सुख इन्हें होना चाहिए' ऐसी मान्यता रखने वाला हुआ हूँ। जबकि वह तो जिस हेतु से आया था, वह हेतु उसका पूरा हो जाए तो खुश!

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : फिर निकालना नहीं पड़ता, अपने आप ही चला जाता है। 'भाई, आप सोच रहे हो उससे ज़्यादा का नुकसान हुआ है।' तो उस व्यक्ति को चैन मिलता है!

प्रश्नकर्ता : अब समझ में आया।

दादाश्री : क्योंकि हमारे पास सब प्रैक्टिकल होता है! थ्योरीटिकल (सैद्धांतिक) हो, उसका क्या करना है?

हमारी लाइफ ही खुल्लम-खुल्ला

बचपन से किंचित्मात्र लोभ नहीं था और लोभ नहीं होने से कपट भी नहीं था। इसलिए मेरी लाइफ ही खुल्लम-खुल्ला थी! जब कर्ज हो जाता था, तब लोगों को बता देता था कि 'कर्ज अभी बहुत हो गया है' और व्यापार में कमाता

था तब उसी समय बता देता था कि 'कमाया है'। तब हमारे भागीदार कहते हैं, 'यह कर्ज की बात आप बता दोगे तो...' मैंने कहा, 'उधार नहीं देंगे, इतनी ही झंझट है न, तो (बल्कि) कर्ज कम होगा।' उधार देते हैं तब कर्ज बढ़ता है न! और ये कमाए ऐसा कहने से क्या कोई ले जाएगा? तो इस तरह खुल्लम-खुल्ला बोलने की आदत पहले से ही थी। हर एक चीज़ खुल्लम-खुल्ला!

तो व्यापार में जैसा हो वैसा लोगों को बता देता था। तब एक व्यक्ति मुझसे कहता है, 'ऐसा क्यों कह देते हैं?' तब मैंने कहा, 'जिसे लोगों से लोन के रूप में रुपये लेने हों, वह गुप्त रखे। परंतु हमें तो लोन के रूप में रुपये नहीं लेने हैं। और देना हो तो जानकर भी दें, ओपन टू स्काई था हमारा।' इसलिए बता देता था, 'इस साल बीस हज़ार रुपये का नुकसान हुआ है या आज इतना नुकसान हुआ है।' वह मैं ओपन ही कर देता था। झंझट ही नहीं न! मैं तो साफ ही बोलता था हमेशा। घबराहट किसे होती है? पूंजी लेनी हो उसे। मैं तो साफ ही कहता था, जैसा हो वैसा। क्योंकि यह अच्छा है बल्कि। लोगों का उधार देना बंद हो जाएगा तो बल्कि कर्ज धीरे-धीरे कम हो जाएगा। तब लोग क्या कहते हैं, 'अरे, वे उधार नहीं देंगे फिर तो।' अरे, परंतु (नया उधार देंगे तो) कर्ज बढ़ जाएगा बल्कि! तो बल्कि कर्ज बढ़ जाए उसके बजाय साफ-साफ बता दे न, जो हुआ है वह। लोग उधार लेने के लिए ऐसा उल्टा करते हैं।

खुला करने के पीछे की समझ

प्रश्नकर्ता : खुला करने से क्या फायदा होता है?

दादाश्री : नुकसान हुआ हो तब भी सामने वाले को स्पष्ट बता देना चाहिए। ताकि सामने वाला (अच्छी) भावना करे। उससे खराब परमाणु उड़ जाएँगे और खुद हल्का हो जाएगा। वर्ना अकेला अंदर उलझता रहे तो ज़्यादा बोझ लगता है!

वर्ना, व्यापार में नुकसान हुआ हो तो लोगों से कह देता था और फायदा होता था तो भी कह देता था, लोग पूछें तभी, वर्ना मेरे व्यापार की बात ही नहीं करूँ, कभी भी। लोग पूछें, कि 'आपको अभी नुकसान हुआ है, क्या यह बात सही है?' मैं कहता था, 'बात सही है।'

जिसे पैसे चाहिए, वे घोटाला करें

भागीदार क्या कहते थे मुझसे? आपने बड़ौदा जाकर ऐसा कहा था कि 'अभी इस साल हमें बहुत नुकसान हुआ है?' तब मैंने कहा, 'ऐसा कौन नहीं कहेगा? अगर हम कहें कि नुकसान हुआ है तो कोई भी लेने नहीं आएगा।' तब कहते हैं, 'परंतु इस तरह नुकसान का कहें तो अच्छा नहीं है न!' तब मैंने कहा, 'नुकसान के बारे में कौन नहीं कहेगा?' जिसे लोगों से, पब्लिक से रुपये उधार लेने हैं, उसे ऐसा कहना पड़ेगा कि हमें बहुत फायदा हुआ है। हमें नहीं लेना है, फिर व्यर्थ में क्यों हाय-हाय करते रहें हम? किसी से नहीं लेना है हमें और अब यह झंझट, ये सब छिपाते रहने से फिर क्या फायदा? और बाहर लोग जान जाएँगे इससे डरो मत।' लोग जानेंगे तभी सही बात बाहर आएगी। हर्ज़ क्या है? उसमें डरने जैसा क्या है? जो हुआ है वह कहना है। लोग रुपये उधार क्यों लेते हैं? यह इतना घोटाला है न? लोग उधार न दे, इसलिए खुला कर देना चाहिए।

खुला करने से साफ रहे

हम तो (रुपये) लेने में मानते ही नहीं थे। ऐसा ब्याज हमारे ऊपर चढ़ा ही नहीं है। कभी ऐसे ब्याज के चक्कर में पड़े ही नहीं। और व्यापार भी कम करते थे, झंझट ही नहीं। यह कैसी परेशानी? साथ में नहीं ले जाएँगे कुछ। हमने पता लगाया

था, क्या-क्या लेकर जा सकते हैं? उसके बाद ये बाउन्ड्रीज़ (सीमाएँ) बनाईं। वहाँ पर कुछ भी लेकर नहीं जा सकते।

प्रश्नकर्ता : तो आपका कहना है, कि मन संग्रह कर रहा हो तो उसे खुला कर देना चाहिए।

दादाश्री : हाँ। खुला करने से मन साफ रहता है हमेशा। बोझ कम हो जाता है। बिना काम के कब तक उलझन में रहोगे? बाद में मन सवार हो जाएगा। अपने पास इतनी पूंजी है, इसलिए मन वहाँ सवार हो जाता है।

बड़े-बड़े व्यापार किए परंतु चले नहीं

प्रश्नकर्ता : दादा, एलेप्पी में आपने व्यापार किया था, उसकी बात बताइए न!

दादाश्री : हाँ, वह हमारा बिजनेस था। 'वेस्टर्न इन्डिया ट्रेडिंग कॉरपोरेशन' कंपनी खोली थी हमने। सोंठ-काली मिर्च, इत्यादि का बड़ा जबरदस्त काम था! यादें रह गई, रुपये ले गया। पहले कालाबाज़ार के आए थे वह सबकुछ ले गया और यादें रह गई, याद करने के लिए रहा। नहीं? ज़्यादा रुपये कमाए थे, वे सब चले गए। बड़ी पीढ़ी चल रही थी जबरदस्त! तो यहाँ पर चलता था बिजनेस, वहाँ भी बिजनेस चलता था। यहाँ पर तो स्टील फैब्रिकेशन का था। फैब्रिकेशन के बहुत बड़े काम किए। पूरा कारखाना ही था न अपना।

प्रश्नकर्ता : तो रोड के और पुल के काम भी किए थे क्या, दादाजी? गवर्नमेन्ट के काम भी कॉन्ट्रैक्टर के तौर पर?

दादाश्री : वे भी बहुत किए थे। बड़े-बड़े रोड के और उन सब के। लेकिन ये फैब्रिकेशन के भी बहुत किए। इसमें दो-तीन लाख रुपये का लॉस (घाटा) हुआ इसलिए फिर बंद कर दिया था। निजी रूप से, प्राइवेट (उल्टे-सीधे) किए थे न! और जहाँ देखो वहाँ झगड़े। झगड़े के अलावा अन्य कोई बात नहीं। हम किसी का नुकसान नहीं कर सकते थे और लोग हमें नुकसान दे जाते थे। कुछ तो होगा तभी लोग नुकसान दे गए होंगे न, कोई मुफ्त में थोड़े ही नुकसान दें जाए, ऐसे हैं! माल (लोग) भी ऐसा था न, झूठा माल!

थककर अंत में खोजा खुद का सुख

हमारी स्टील कंस्ट्रक्शन की बहुत बड़ी कंपनी थी। 1949 में बहुत सारे पैसे डूब गए थे न, इसलिए बंद कर दी थी। अत: सारे व्यापार कर चुके हैं। नट-बोल्ट सब बना चुके हैं, कुछ भी बाकी नहीं रखा। बड़े-बड़े स्टील कन्स्ट्रक्शन किए, बहुत झंझट की, परंतु हाथ में कुछ भी नहीं रहा।

प्रश्नकर्ता : हाँ, इसलिए नॉलेज (ज्ञान) है सारा।

दादाश्री : हाँ, यानी सभी चूहों को खाकर यह बिल्ली ऊपर बैठी है! ('बहुत मार खाकर अनुभवी हुए है') किसी में सुख नहीं मिला इसलिए खुद का सुख खोज लिया फिर।

प्रश्नकर्ता : अब तो आप वह सुख सभी को बाँट रहे हैं न!

दादाश्री : हाँ, लेकिन 'जो सुख मैंने पाया वह सभी लोग प्राप्त करें', यही हमारी भावना है, जगत् में! क्योंकि सारे व्यापार किए परंतु मार ही खाई हैं। मार खिलाई नहीं लोगों को। पूरी ज़िंदगी मार ही खाते रहे हैं लोगों की। लोगों ने जो मार मारी है उसके विरोध में रिएक्शन (प्रतिक्रिया) नहीं दिया।

प्रश्नकर्ता : ये आपकी पुस्तकें पढ़ते हैं तभी उसका पता चलता है।

दादाश्री : यहाँ से एलेप्पी तक बिजनेस था। त्रावणकोर स्टेट में, एलेप्पी में सोंठ-काली मिर्च

का बड़ा जबरदस्त कॉर्पोरेशन था। सबकुछ कर चुके हैं परंतु अंत में सब से थक गए।

प्रश्नकर्ता : बहुत मेहनत की होगी तब?

दादाश्री : हाँ, बहुत मेहनत, खूब मेहनत की थी। लोगों ने बहुत नहलाया (धोखा देते रहे) है। और न्याय-अन्याय, यह हमारा ही फल हमें दिया है। लोग क्या कहते हैं? 'उन लोगों ने आपको नहलाया?' मैं कहता हूँ, 'नहलाया ज़रूर परंतु पानी हमारा ही था (हमारा ही हिसाब था)!'

काल के संग में, कालाबाज़ारी का असर

तो मार बहुत खाई। कालाबाज़ारी की और सबकुछ किया फिर मार-परेशानियाँ हुई बल्कि।

प्रश्नकर्ता : दादा, तब कालाबाज़ारी तो नहीं थी।

दादाश्री : अरे, थी! कालाबाज़ारी होती थी। 1942 में बड़ौदा में हमने कारखाना खोला था। विटको इंजीनियरिंग कंपनी, वे उस समय कपास निकालने के चिमटे आते थे न, वैसा सब। बहुत बड़ा लोहे का कारखाना था, तो उसका फैब्रिकेशन का काम था। तब फैब्रिकेशन वर्कस सारे लेते थे। बड़े-बड़े कारखाने थे, इसलिए लोहे की तो उसमें बहुत ज़रूरत होती है, बहुत चाहिए। परंतु उन दिनों लोहा क्या भाव था? तीन सौ रुपये भाव था और स्क्रैप में (भंगार में) सवा दो सौ रुपये भाव में लाते थे। वह स्क्रैप का माल भी सब अच्छा निकलता था। हमारे फैब्रिकेशन में स्क्रैप के माल की ज़रूरत थी न। तब तीन सौ रुपये भाव था, अभी तो पाँच हज़ार रुपये भाव है।

प्रश्नकर्ता : पाँच हज़ार से पंद्रह हज़ार, जैसा माल।

दादाश्री : अरे, हम सन् 1968 तक तो हज़ार रुपये में लाते थे। हमें जयगढ़ की जेटी बनानी थी न, तो सन् 1968 में यहाँ से ले जाते थे हज़ार रुपये में। और इतने सालों में (1983 में) तो पाँच हज़ार हो गए!

प्रश्नकर्ता : उस समय के तीन सौ रुपये भी तो बहुत ज़्यादा थे न?

दादाश्री : तीन सौ थे, परंतु हम बाज़ार में बेचते थे तो नौ सौ आते थे।

प्रश्नकर्ता : ऐसा क्यों, दादा?

दादाश्री : कालाबाज़ार! इच्छा नहीं होने के बावजूद कालाबाज़ार (हमारे व्यापार में) प्रवेश कर गया था। इस विचित्र काल में व्यापार घड़ी में आता है और कालाबाज़ार में प्रवेश हो जाता है। सारा संग तो कुछ असर किए बिना रह ही नहीं सकता न! हमारे भी कालाबाज़ार चलते ही रहते थे न, व्यापार बड़े थे इसलिए।

प्रश्नकर्ता : दादा, परंतु आत्मा में जागृति थी न, आपकी?

दादाश्री : जागृति तो थी ही, परंतु कालाबाज़ार का असर सब होता रहता है न! सारा संग तो था न, यही का यही।

इच्छा नहीं फिर भी हुई कालाबाज़ारी

प्रश्नकर्ता : परंतु दादा, आप उस कालाबाज़ार के संग में किस तरह फँस गए, वह बताइए न!

दादाश्री : वह तो लोहे का कारखाना था और उसमें वे चिमटे बनाए जाते थे। कपास के सूखे डंठल खिंचने के लिए और ऐसा-वैसा था सब, बाकी सब औज़ार (साधन), एग्रीकल्चर इन्ट्रूमेन्ट्स थे। हमने उनके कॉन्ट्रैक्ट लिए थे। तो सरकार सस्ते भाव का लोहा सप्लाय करती थी न, उसमें ज़्यादा लोहा आता था। उन दिनों ग्यारह रुपये हंडरवेट यानी दो सौ बीस रुपये टन। जबकि बाहर तैंतीस रुपये भाव चलता था। यहाँ पर हमारे

भागीदार के कॉन्ट्रैक्ट के व्यापार में सरकार डेढ़ आने फीट पाइप देती थी जबकि बाहर एक रुपये फीट भाव चलता था।

अब सरकार हमारी पहचान होने से बहुत सारा लोहा देती थी। उस लोहे का फिर क्या करते, यहाँ पर ज़्यादा उपयोग नहीं होता था। अब हम पैसों को लेकर उलझन में पड़ गए थे। वह माल तो बहुत सारा पड़ा रहता था, तो फिर पैसे निकालने के लिए हमें कुछ करना तो पड़ेगा न? उसे थोड़ा बेचना तो पड़ेगा ही न? तब फिर ये कालाबाज़ारी कर नहीं सकते थे और इसे मूल कीमत पर बेच नहीं सकते थे। अब यहाँ थी सारी उलझनें!

तो हम थे सिद्धांतवादी, इसलिए हमारे प्रिन्सिपल में रहे, फिर बारह महीने तक कालाबाज़ारी नहीं की थी।

कालाबाज़ारी नहीं करने की इच्छा थी। इस तरह चोर नीयत ज़रा भी नहीं थी। परंतु बुद्धि ने कुछ तो मार खिला दी। कैसे मार खिलाई? वह लोहा तो इकट्ठा होने लगा और कुछ पैसे हमें ब्याज से लेने पड़े। तब एक व्यक्ति ने मुझे अपनी होशीयारी दिखाई। एक-दो लोग थे न, वे दलाल मेरे पहचान वाले थे। वे कहते हैं, 'साहब, इतना सारा माल है, हमें दे देने में क्या बुराई है?' मैंने कहा, 'भाई, कालाबाज़ारी हमसे नहीं हो सकती।' तब मुझसे कहते हैं, 'आप इतने ज़्यादा *लागणी* वाले व्यक्ति हैं, आप स्वयं व्यापार मत करो परंतु हमें तो करने दो, भला। हम तो दुःखी हैं, हमारा दुःख तो दूर हो जाए। साहब, आप ज़्यादा भाव मत लो और कालाबाज़ारी मत करो, उसमें हर्ज़ नहीं है, परंतु हम जैसे गरीब का ठिकाना पड़े न! मेरे जैसे का गुज़ारा चले, ऐसा तो कुछ कर दो।' तब मैंने सोचा, इस बेचारे का काम हो रहा है तो होने दो। इसलिए मुझे उसके प्रति *लागणी* हुई, दया आ गई। अब यह मैं भूल कर बैठा वहाँ पर।

तो कहते हैं, 'कालाबाज़ार के भाव भले ही तैंतीस रुपये हैं, वह आप मत लेना लेकिन मेरे जैसे का गुजारा निकले, ऐसा तो कुछ कर दो।' तब मैंने कहा, 'लेकिन मुझे इसे तुम्हें बेचना पड़ेगा न?' 'हाँ, कम भाव में दो ताकि हमारा गुजारा निकले', कहते हैं। तब मैंने कहा, 'आपको किस भाव में दें?' तब कहते हैं, 'बाज़ार में तैंतीस रुपये भाव चल रहा है तो हमें कम रुपये में दो। ताकि उसे कालाबाज़ार नहीं कहा जाएगा।' तो मुझे वह समझ में नहीं आया कि यह मेरी क्या भूल हो रही है। मैंने सोचा, 'इनका दुःख दूर होगा तो अच्छा है।' तो मैंने कहा, 'हम किस भाव में बेच सकते हैं?' तब कहते हैं, 'तैंतीस भाव चल रहे हैं अभी हंडरवेट के, तो पाँच हमसे कम लो।' तो मैंने कहा, 'नहीं, पाँच नहीं, सात कम।' परंतु मैंने क्या समझा, कि इनके मन को संतोष हुआ, इसलिए इसे कालाबाज़ार नहीं कहेंगे।

बाद में उससे लेने वाले एक व्यक्ति से मैंने पूछा न, तब कहते हैं, 'पैंतीस रुपये लेता है। आपने तो तैंतीस कहा था न, वहाँ बाज़ार में तैंतीस चल रहा है और इसने पैंतीस लिए मुझसे।' 'अरे, छब्बीस में देता हूँ इसे और यह पैंतीस लेता है!' तब मुझे समझ में आया, यह तो बल्कि और अधिक लूटने लगा है। कालाबाज़ार नहीं करना था और उसने सिखा दिया। मैं सोचता था कि यह बेचारा कमाई करके खा रहा है, अपना गुजारा निकाल रहा है। परंतु बाद में मैंने हिसाब निकाला कि उस दलाल ने पैंतीस में बेचा। तो मैंने सोचा, 'यह तो बल्कि ग्राहक को हमने परेशानी में डाल दिया। उसे सीधा ही तैंतीस में दिया होता तो वह कालाबाज़ार अच्छा कहा जाता। यह तो कालाबाज़ार का बाप किया'!

इच्छा नहीं थी ऐसे इकट्ठे करने की, लेकिन लोगों ने सिखाया कालाबाज़ार। यह हमारी समझ

में नहीं आया उस समय। मैं तो सोचता था कि इस दलाल का बेचारे का खर्च निकलेगा, परंतु उसके खर्च निकलने के पीछे इस तरह पब्लिक को क्या हुआ? मैं ग्यारह के तैंतीस लेता था, वह सारा कालाबाज़ार था। ऐसा लाइसेन्स कितने ही लोगों के पास होता है, दूसरा होता है, तीसरा होता है, उन सब का दुरुपयोग, वह सब कालाबाज़ार कहा जाता है।

काला धन रोम रोम में काटने लगा

1942 से 1946 तक कालाबाज़ार किया था। तो मेरे पास काला धन दो-एक लाख रुपये आ गया था उस समय, हमारे भागीदार और मेरे नाम पर। तब मुझे तो विचार भी नहीं आया था कि ऐसा कालाबाज़ार करना है या इस तरह किसी को दुःख देना है या इस तरह कोई पैसे इकट्ठे करने हैं, ऐसी भावना नहीं थी। फिर भी आ गया, तो फिर देख लो, परिणाम उसका। अच्छे माँ-बाप का बेटा हो और चोरी करके लाए तो उन्हें नींद कितने दिनों तक आएगी?

प्रश्नकर्ता : नहीं आएगी।

दादाश्री : खटकता रहता है न! वह तो मुझे भी रोम-रोम में काटने लगा था। इसलिए मैंने अपने भागीदार से कहा, 'यह आपके पास और मेरे पास कालाबाज़ार की यह जो पूंजी है, वह जल्दी से जल्दी चली जाए, यह धन ठिकाने पर लग जाए तो शांति हो जाएगी।' तब कहते हैं, 'ऐसा क्यों कह रहे हैं?' तब मैंने कहा, 'नहीं, फिर रखकर क्या करना है? ये यहाँ से चले जाएँ तो अच्छा, काला धन।'

'हे भगवान, ये धन यहाँ से चला जाए अब!' जब था तब तय किया था। बाद में रोम-रोम में काटने लगा, रात को भी काटता था। कई बार मुझे नींद भी नहीं आती थी। उसके लिए मैंने मन्नत रखी थी कि यह चला जाए तो अच्छा, जल्दी जाए तो अच्छा। मेरे घर शांति थी, उसके बजाय उपर से यह परेशानी आई! बारह महीने में मेरे पाँच सौ-सात सौ रुपये बचते थे, हजार बचते थे, ऐसा मेरा कॉन्ट्रैक्ट का व्यापार चलता रहता था और खर्च निकलता था। अच्छी तरह से वैभवपूर्वक खर्च निकल जाए, उसके बाद और क्या चाहिए हमें? उसके बजाय यह झंझट कहाँ से आ गई? कोमल स्वभाव के व्यक्ति थे, इसलिए रात-दिन नींद नहीं आती थी।

तो ऐसे कर्म नहीं किए थे और फिर करने लगे। क्योंकि किस्मत में लिखे थे, इसलिए छुटकारा नहीं मिला। लेकिन मुझे वे पैसे दुःखदायी लगे, आखिर तक, पूरे जीवन भर। मूलतः बहुत दुःख होता रहता था कि यह गलत धन आ रहा है। नहीं चाहिए वह धन आ रहा है।

काले धन से आपको बहुत परेशानी होगी

अच्छा हुआ, गलत धन टिका नहीं। मुझे तो सही धन भी पसंद नहीं था। धन का क्या करना है? क्या साथ में ले जाना है? बेवजह की पीड़ा है ये सब! समुद्र में जलस्तर बढ़ता है तो मुंबई में यह दस फीट ऊपर और खंभात में बाईस फीट ऊपर जाता है। उससे खुश होने जैसा नहीं है, बाईस फीट नीचे भी उतरता है वापस।

प्रश्नकर्ता : हाँ, उतरता ही है वह।

दादाश्री : यहाँ तो दस ही फीट उतरता है। इसलिए खुश होने जैसा नहीं है, सब। चढ़ाव-उतार, चढ़ाव-उतार समान, इक्वल और ऑपोज़िट (विपरीत दिशा में) होता है। कैसा होता है?

प्रश्नकर्ता : ऑपोज़िट होता है।

दादाश्री : अच्छे काम में खर्च हुआ उतना अपना, बाकी सब पराया।

यह काला धन कैसा है, वह समझाता हूँ। यह बाढ़ का पानी आपके घर में आ गया हो, तो आपको खुशी होती है कि घर बैठे पानी आ गया। इसलिए नहाने-धोने में मजा आ जाएगा अभी। घर बैठे पानी, कुए से लाना भी बंद हो जाएगा! बाढ़ का पानी मुफ्त में आ गया इसलिए रहते हैं ऊपर और नीचे आकर बर्तन धो डालेंगे सब। परंतु यह पानी तो चार दिन टिकेगा और कीचड़ छोड़कर चला जाएगा! आखिर में क्या छोड़ता है?

प्रश्नकर्ता : कीचड़ छोड़ जाता है।

दादाश्री : घर में सब पूरा कीचड़ इतना सारा चिपक जाता है। इसलिए फिर उसे धोने के लिए नया पानी लाना पड़ेगा और आपको बहुत परेशानी हो जाएगी। इसलिए सावधान हो जाओ।

प्रश्नकर्ता : हाँ, वह बात सही है, दादा।

इक्यावन से चोरी बंद, अट्ठावन में ज्ञान

प्रश्नकर्ता : यह कॉन्ट्रैक्ट का आपका जो व्यापार था ज्ञान होने से पहले, तो उसमें थोड़ी कुछ ऐसी-वैसी गड़बड़ करनी पड़ी हो, उल्टा-सीधा करना पड़ा हो और ज्ञान होने के बाद ऐसा कुछ उल्टा-सीधा करना पड़ा हो, तब आपको भीतर तो कॉन्शियस (सचेत) बाइट करता होगा न?

दादाश्री : नहीं, ज्ञान होने से पहले, सात साल पहले गलत काम बंद कर दिया था। 1951 में गलत काम सब बंद कर दिया था और 1958 में ज्ञान हुआ। मैं स्वयं को तो इसके (लायक) योग्य भी नहीं समझता था। मुझे इतना बड़ा (ज्ञान) हो जाएगा, मैं (स्वयं को) इसके योग्य भी नहीं समझता था। कॉन्ट्रैक्ट का नंगा व्यापार, सिमेन्ट की चोरियाँ करें, वह ऐसी योग्यता कैसे प्राप्त करें? परंतु कुदरती रूप से यह ज्ञान हो गया। 1951 में चोरियाँ बंद की थी सिमेन्ट-विमेन्ट की सारी। उससे पहले तो सिमेन्ट निकाल लेते थे, लोहा निकाल लेते थे। चोर ही थे ये तो, ऐसा ही कहो न! व्यवहारिक चोर को सभी लोग कहते हैं कि 'चोर है'। हमें हमारा मन कहता था कि 'चोर है'। सारा जगत् चोरी ही कर रहा है। निरी चोरियाँ ही की हैं। यदि चोरी न करें तो खुद परमात्मा हैं! यह गलत रास्ते पर चले, उसकी तो ये मार पड़ रही हैं।

स्वयं को पकड़ में आए, ऐसी चोरियाँ

व्यापार में शुरुआत के सालों में चोरियाँ की थी। अब हमारी चोरियाँ तो पुलिस वाला पकड़ें, ऐसी नहीं होती थीं। कोई पकड़े ऐसी नहीं होती थीं वे। हम स्वयं ही पकड़ें तो पकड़ में आएँ वे, ऐसी हमारी चोरियाँ थीं। यानी सरकार के काम में से, सिमेन्ट निकाल लेते थे, कम मात्रा में डालते थे। सरकार ने सोलह आने कहा हो, तो हम चौदह आने ही डालते थे या फिर बारह आने। तो उसमें वह साहब देखता था, कहता है, 'इसमें से एक आना मुझे देना पड़ेगा।' 'अच्छा तुम्हें दे देंगे।' सौदेबाजी! ऐसी चोरियाँ की थीं। यानी दूसरे लोग दस आने सिमेन्ट डालते थे, तो मैं बहुत नोबल था इसलिए मैं बारह आने डालता था। परंतु चार आने तो निकाल ही लेता था न! चोरी करते थे, खुलेआम।

तो इतना सारा धर्म करने के बावजूद भी, कृपालदेव की पुस्तकों का अध्ययन करते रहते थे, फिर भी चोरियाँ बंद नहीं हुई थीं। इससे मुझे समझ में आया कि धर्म कहीं और ही है, इसमें धर्म नहीं है। यह तो अवलंबन है एक प्रकार का। धर्म कुछ और ही होना चाहिए, धर्म ऐसा नहीं होना चाहिए। चोरियाँ-वोरियाँ सब होती रहें क्या? बाद में अहंकार करके हमने चोरी बंद की थी, 1951 में। तब से हमारा तौर तरीका इस तरफ मुड़ गया, बाकी चोरियाँ कर-करके दम निकल गया।

पहले मैं ऐसा समझता था कि इसे चोरी

नहीं कहते। सरकार की चोरियों में चोर कौन है? उसका कौन मालिक है? कोई एक मालिक नहीं है, सभी मालिक हैं। जवाहरलाल नेहरू भी मालिक नहीं है और गांधी भी नहीं है और कोई नहीं है। यह तो सारी खोखली बातें हैं! और फिर लोगों को यह चोरी करना सिखाता था! लोग कहते हैं, 'यह सरकार का निकाल सकते हैं क्या?' तब मैंने कहा, 'देखो भाई, यहाँ सरकार कौन है? उसका कोई व्यक्ति, व्यक्तिगत नहीं है वह चीज़। जैसे कि आकाश। आकाश में तीर चलाएँ तो किसकी हिंसा होगी?' ऐसा कहकर बड़ा अवलंबन लिया था!

भीतर की घबराहट से समझ में आई भूल

बाद में मुझे समझ में आया, 'यह तो मैं स्वयं की चोरी कर रहा हूँ, उनकी चोरी नहीं कर रहा हूँ। मैं अपने आपको धोखा दे रहा हूँ।' क्योंकि साहब आते थे न तो भीतर घबराहट होती रहती थी। अरे भाई, साहब आते हैं तब तुम्हें क्यों घबराहट होती है? हम चोरी करते हैं, ऐसा हमें ही पता है। वह पता नहीं होना चाहिए? खुद का भान है न!

1951 से पहले जो चोरियाँ की थी, उनके लिए हू इज़ रिस्पॉन्सिबल (कौन जिम्मेदार है)? चोरी की ही नहीं, फिर सिखाई भी थी! आपके जैसे आते थे, कि 'मेरे पास इस तरह से कुछ भी कमाने का कोई रास्ता नहीं है, कुछ रास्ता दिखाओ न!' तो मैं कहता था कि 'इतनी सिमेन्ट की बोरियाँ निकाल लेना, चुपके से।' अक्ल वाले इतने ज़्यादा थे दूसरों को रास्ता दिखाते थे, रास्ता निकाल देते थे। बताओ अब, ऐसे काम किए! क्या बाकी रखा होगा? अक्ल के मूर्ख! मान दिया न, तो उसे सबकुछ दे दें।

सिमेन्ट वह रक्त, लोहा वे हड्डियाँ

प्रश्नकर्ता : दादा, आपकी यह चोरी की शुरुआत कैसे हुई थी?

दादाश्री : लोगों का देखकर सीखा था, गलत रास्ता। अच्छा व्यापार था कॉन्ट्रैक्ट का, खानदानी व्यापार, उसमें दूसरे आधे लोग हल्की जाति वाले आ गए थे न, इसलिए स्पर्धा में आना पड़ा। और स्पर्धा में तो चोर चोरी करे तभी उसका दिन बीतता है। इसलिए सिमेन्ट कम डालते थे। क्या कम डालते थे?

प्रश्नकर्ता : सिमेन्ट कम डालते थे।

दादाश्री : ये जैसे मनुष्य को भोजन खिलाते हैं न, उसमें दूसरा जो चरबी वाला भोजन सब, उसमें यों बदलाव कर देते हैं न? बदल देते हैं न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, बदल देते हैं। उसके जैसा इसमें।

दादाश्री : उसी तरह इसमें से सिमेन्ट निकाल लें न, फिर मकान कितना मजबूत बनेगा? वह सिमेन्ट तो ब्लड (रक्त) कहलाता है और लोहा निकाल लेना, वह स्केलेटन (हड्डियाँ) है। तो लोहा और सिमेन्ट, ये दोनों निकालना बंद किया। आफत बंद कर दी, नाइन्टीन फिफ्टी वन (1951) से बंद। उसके बाद शांति हो गई! मुझे भीतर बहुत खटकता रहता था कि अरे, यह मकान में से सिमेन्ट निकालना, वह मनुष्य में से ब्लड और माँस निकालने जैसा है।

इसमें से सिमेन्ट निकाल लें न, तो फिर दीवारों को तोड़ना हो तो देर नहीं लगेगी। ईंटें पूरी निकल जाएगी, निकालें तो। वह सिमेन्ट निकालना तो यह शरीर से खून निकालने जैसा है। इस शरीर से कोई ब्लड निकाल ले, तो क्या रहेगा बेचारे का? वह सिमेन्ट तो मकान का ब्लड है और लोहा, वह स्केलेटन है सब, हड्डियाँ हैं। वे ही निकाल लें, तो बताओ, वे मकान फिर कैसे टिके रहेंगे!

इसलिए फिर मैंने कॉन्ट्रैक्टरों को इकट्ठा

करके कहा, कि भाई, सिमेन्ट तो ब्लड है इस मकान का और यह लोहा तो स्केलेटन है, अत: कोई मत निकालना तो तब से वे लोग सीधे होने लगे थे। हाँ, दस प्रतिशत भाव अधिक ले लो, हर्ज़ क्या है? अधिकारी कहाँ ऐसा कहते हैं कि आप कम भाव में दो। ऐसा नहीं है, वे अधिकारी ऐसा कुछ नहीं कहते। कॉन्ट्रैक्टर ही टेढ़े हैं।

हमने बहुत चोरियाँ की। निरी सिमेन्ट की ही चोरियाँ की। खून चूसा सरकार का और मन में क्या माना? सरकार की चोरी, वह क्या कोई व्यक्तिगत है? ऐसा मन में मानकर, यों सोचा कि इसे चोरी नहीं कहते। अरे भाई, लेकिन मकान का क्या होगा? मकान में से खून (सिमेन्ट) निकाल लिया जब गिर जाएगा तब क्या होगा? कितने लोग मर जाएँगे?

प्रश्नकर्ता : दब जाएँगे।

दादाश्री : और अपनी नीयत चोर है, वह तो समझ में नहीं आता था? नीयत चोर हुई, उसे ही चोर कहते हैं।

भूखे मरेंगे लेकिन चोरी बंद

हमारे भागीदार से मैंने कहा, 'हम यह चोरी करना बंद करें। आपको नहीं पुसाता हो तो मुझे अब स्वतंत्र करना है, मुझे अलग होना है। अब चोरी नहीं करनी है। चोरी किसी चीज़ की नहीं।' तब कहते हैं, 'बंद करेंगे तो इन सभी के साथ प्रतिस्पर्धा में कैसे टिके रह पाएँगे?' मैंने कहा, 'तो मुझे अलग कर दो। हम दोनों अलग हो जाएँ।' तब कहते हैं, 'नहीं, आपको नहीं छोडूँगा। मैं भी वैसा ही करूँगा, मुझे भी अधोगति में नहीं जाना है और आपकी भागीदारी बिना मेरा नहीं चलेगा।' तो मैंने कहा, 'चोरी नहीं करनी'। तब कहते हैं, 'हाँ, बंद कर देते हैं।' उनका (मेरे बिना) चले, ऐसा नहीं था, तो मुझसे कहते हैं, 'अच्छा, बंद कर देते हैं।' तो तब से सही काम करना शुरू किया सन् 1951 से, तब जाकर सब ठीक हुआ। तब से निश्चय किया कि भूखे मर जाएँगे लेकिन यह नहीं होना चाहिए। और मुझे बिल्कुल पसंद नहीं आता था। ये सरकार का (सरकारी काम में) सिमेन्ट-विमेन्ट निकालते थे न, उस समय भी मुझे भीतर घबराहट होती थी। अरे, ऐसा यह काम हमें मिला? अरे, यह हमें पसंद नहीं है! और फिर वह धन रहा भी नहीं।

चोरियाँ बंद करने के बाद बरती शाता

हमने ये चोरियाँ बंद की, उसके बाद विचार ज़रा अच्छे आए, बदलाव हो गया। वर्ना, पुस्तकें पढ़ी, परंतु कुछ बदलाव नहीं हुआ था। उसके बाद, चोरियाँ बंद हो गई तो फिर अच्छा हो गया, ठंडक रही! सन् 1951 में चोरी बंद की, तब फिर 1958 में यह ज्ञान प्रकट हुआ, वर्ना भटक जाते।

गलत काम करना बंद कर दिया, उसके बाद तो काम ही ऐसा मिलता था कि ज़्यादा काम नहीं करना पड़ता था। कम मेहनत में ही बहुत पैसे कमाए, उसके बाद यह ऐसा उत्पन्न हुआ। क्योंकि नियम ऐसा है कि तुम्हारे पास रुपये तो इतने ही आएँगे, भाई। और यदि ज़्यादा ले लोगे न, तो उनका लीकेज हो जाएगा, वे तुम्हारे पास होंगे उसमें से चले जाएँगे। परंतु तुम्हें शाता की अनुभूति नहीं होगी (तुम भोग नहीं पाओगे)।

भगवान ने क्या कहा है? शास्त्र में कहीं भी लक्ष्मी के बारे में लिखा है? क्यों? तो क्या लक्ष्मी के बिना चलता है कुछ? तब कहते हैं, लक्ष्मी के बिना नहीं चलता। परंतु शास्त्र में यह बात क्यों नहीं लिखी? तब कहते हैं, शास्त्र में तो वेदनीय लिखा है। क्या लिखा है? वेदनीय, कि भाई को शाता वेदनीय है या अशाता वेदनीय है? इतना ही पूछा जाता है। तो मुझे 1951 के

बाद शाता वेदनीय बरतती थी। क्योंकि जब तक नैतिक स्तर न हो तब तक शाता वेदनीय नहीं हो सकती। आपके नैतिक स्तर के लिए मैं दबाव नहीं डाल सकता।

फिर कालाबाज़ार भी बंद किया और चोरी भी बंद की। उसके बाद सही तरीके से जीवन जिया, सन् 1951 के बाद। तो आज लक्ष्मी जी मेहर कर रही हैं। नीति के मार्ग पर, नीति के फाउन्डेशन पर बनी हुई मिनारें क्या गिरती होंगी?

पहले हमें दो-तीन साल तक परेशानी आई, फिर तो अपने आप ही काम ऐसा आता था न, फिर तो हमारा क्रेडिट बढ़ जाता था सारा। फिर हमें काम के लिए कभी टेन्डर भरने के लिए जाना नहीं पड़ता था। घर बैठे ही यों पता चल जाता था। तुरंत ही ये सभी साहब बता देते थे, घर आकर बता देते थे। क्योंकि उनकी परेशानी में हम उनके साथ खड़े रहते थे न, इसलिए वे अपने मन में हमें अपना ही मानते थे! तो हमें और कोई काम ही नहीं करना पड़ता था। वर्ना सत्संग कैसे चलता? इतना बड़ा व्यापार, दस-दस, बारह-बारह लाख रूपयों का व्यापार चल रहा हो, परंतु ज़रा भी विचार नहीं, काम का विचार ही नहीं आता था।

कालाबाज़ार का धन घर में नहीं घुसने दिया

हमने 1951 के बाद तो बहुत ध्यान रखा कि सरकार के सिमेन्ट की चोरी नहीं करनी है। कुछ भी गलत-उल्टे का उपयोग न हो। फिर भी वह हमारे यहाँ पहले कितनी बार गलत रास्ते से घुस गया था। यह तो, इच्छा नहीं होने के बावजूद वह घुस जाता है। फिर भी हमने घर में ज़रा सा भी *अणहक्क* का उल्टा वह सब नहीं घुसने दिया। हमारी अपनी शुद्ध कमाई को ही घर में घुसने दिया है। यह तो भान ही नहीं है, इसलिए नासमझी से सरकार के सिमेन्ट की अंधाधुंध चोरी करते हैं। ये तो एक ओर पुण्य से कमाते हैं, परंतु दूसरा कचरा माल इच्छा न हो फिर भी घुस जाता है। वह फिर टैक्स वाले खींच ले जाते हैं।

तो ऐसा है! दादा का नाम लेकर व्यापार करना। दादा ने कहा है न, दादा की आज्ञा है कि चोरी नहीं करनी है। चोरी करके अंत में फँस जाओगे तो मिल्कियत भी चली जाएगी। धन का स्वभाव कैसा है, वह आपको बता दूँ क्या? यह धन कितना भी हो, ग्यारह साल बाद वह चला जाता है। कैसा है? ग्यारहवें साल तो वह चला ही जाता है। यानी अभी (1974 में) जो धन आपके पास हैं, वह 1963 का धन नहीं है। 1964-1965-1966 का है, वह धन ज़रूर है। सन् 1963 का नहीं है। यह एक दसक तक नहीं चले, तो फिर क्या दशा होगी? भाई, खाली हो जाओगे। इसलिए कम खाना, कम कपड़े रखना (किफ़ायत करना)। धीरज रखना।

टैक्स की चोरी, वह पब्लिक की चोरी

प्रश्नकर्ता : व्यापार में जो चोरी करते हैं, उसका क्या करना है?

दादाश्री : ये सब चोरियाँ हमने तो बहुत की भाई! पर माफी माँग लेनी है।

प्रश्नकर्ता : अभी व्यापार चल रहा हो...

दादाश्री : आपको याद कर-करके माफी माँग लेनी है। माफी माँगने से अपना कर्म खत्म तो नहीं होगा लेकिन यहाँ पर जो पक्की गाँठ पड़ चुकी है, वह यों माफी माँगने से एकदम ढीली हो जाएगी। फिर अगले जन्म में यों हाथ लगाते ही, वह गिर जाएगी। इसलिए कुछ खास परेशान नहीं करेगी फिर।

माफी माँगने से चौदह आने नाश हो जाता है, दो आने बाकी रहता है। उतना नाश तो करना

ही चाहिए न, अपने से हुए गुनाह का? और हो जाता है लेकिन अनजाने में वह हो जाता है, जान-बूझकर नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : दादा, मैंने इन्कम टैक्स की चोरी की है, बाकी कोई चोरी नहीं की है।

दादाश्री : इन्कम टैक्स की चोरी करना वह गुनाह है। क्योंकि वह टैक्स इस गवर्नमेन्ट को जाता है। उसकी वजह से यह आपका (व्यवहार) संभल जाता है। कुदरत क्या कहती है, कि तू चोरियाँ करेगा, तब मैं भी चोरी करूँगी। वर्ना तेरे नौ हज़ार तुझे मिलने वाले हैं, बारह महीने में, वे नौ मिलेंगे। वे नौ के नौ ही मिलने वाले हैं। न्यायी होने पर एक-दो साल ज़रा परेशानी होगी, लेकिन बाद में पीढ़ी फर्स्ट क्लास चलती रहेगी। तू करना न मेरे नाम पर, दादा कहते हैं ऐसा। यानी न्याय से, नीति से व्यापार करना। क्या कहा?

प्रश्नकर्ता : न्याय से और नीति से व्यापार करना।

दादाश्री : सामने वाला अनीति करे फिर भी आपको नीति नहीं छोड़नी है। यह मैंने भी चोरियाँ करते-करते, 1951 में बंद कर दी थी। मैं तो जन्म से ज्ञानी पुरुष जैसा था, फिर भी इन चोरियों में फँस गया न! फिर पश्चाताप कर-करके दम निकल गया, 1951 से अब तक। तीस-पैंतीस साल पश्चाताप किया।

पहले सरकार न पकड़ें ऐसी चोरियाँ करते थे। वे हमने छोड़ दी कि सरकार पकड़ लेगी, इज्जत चली जाएगी और दूसरी सारी चोरियाँ की हैं इन लोगों ने।

हम तो कभी भी इन्कम टैक्स की चोरी नहीं करते थे। फिर भी मुझे कई बार विचार आता था कि ऐसा करेंगे तो कम टैक्स भरना पड़ेगा! तो ऐसा विचार वह भी गलत ही है। ऐसा विचार तक नहीं आना चाहिए। मैंने अपने भागीदार से कहा था, कि 'साथ में ले जाना है उतना ही बताओ, बाकी सबकुछ तो यहीं पर पड़ा रहेगा।'

प्रतिक्रमण से साफ करो

प्रश्नकर्ता : दादा, टैक्स की चोरी, वह काला धन कहा जाता है?

दादाश्री : पब्लिक का गलत लाभ उठाया, उसे काला धन कहा जाता है।

हम सभी ने तय किया हो, कि भाई, इस तरह से पैसे इकट्ठे करो और इस तरह से सारा तंत्र चलाओ, फिर इस तरह से देश की रक्षा करो पूरी। तो उस तंत्र के ढाँचे में आपने कुछ अलग किया। सभी ऐसा करेंगे तो क्या होगा? तब परिणाम का पता चलेगा न!

प्रश्नकर्ता : सही है, परंतु मैं ऐसा कहता हूँ कि सभी गलत करें तो फिर हमारे अकेले का सही करने का क्या अर्थ निकलेगा?

दादाश्री : नहीं, लेकिन जितना करेगा उतना उसे भुगतना पड़ेगा। आपका आत्मा ही कहता है न, कि यह गलत किया है!

प्रश्नकर्ता : गलत किया है वह सही है, परंतु आत्मा नहीं कहता हो तो क्या करें?

दादाश्री : आत्मा को तो आप जड़ जैसा बनाओ तो वैसा बन जाएगा।

प्रश्नकर्ता : नहीं, नहीं, मैं इसलिए पूछ रहा हूँ कि कई लोग बेफ़िक्र होकर करते हैं।

दादाश्री : बेफ़िक्र होकर करता हो तो भी एक बार उसे कहे न, तो फिर बोलना बंद कर देगा। आवाज़ आनी बंद हो जाती है। तो (आवाज़) बंद हुई हो तो हम उसे क्या कहते हैं, कि 'सब से पहले कुछ दिनों तक प्रतिक्रमण

करना। तो फिर खुला हो जाएगा फिर से। इस तरह से बंद करने के लिए जो कार्य किया उसके विरुद्ध कार्य कर।'

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, अभी टैक्स इतने ज़्यादा हैं कि चोरी किए बिना बड़े-बड़े व्यापार में संतुलन नहीं होता। सभी रिश्वत माँगते हैं तो उसके लिए चोरी तो करनी ही पड़ेगी न?

दादाश्री : चोरी करो लेकिन आपको पश्चाताप होता है या नहीं? पश्चाताप होगा तब भी वह हल्का हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर इन संयोगों में क्या करना चाहिए?

दादाश्री : आप जानते हैं कि यह गलत हो रहा है, वहाँ आपको हार्टिली पश्चाताप करना चाहिए। गलत कार्य की जलन होनी चाहिए, तभी छूट सकते हैं। अभी कुछ कालाबाज़ार का माल ले आए, तो फिर उसे कालाबाज़ार में बेचना ही पड़ेगा। तब चंदूभाई से कहना, कि 'प्रतिक्रमण करो'। हाँ, पहले प्रतिक्रमण नहीं करते थे, इसलिए कर्म के सारे तालाब भर दिए। अब उन्हें प्रतिक्रमण करके साफ कर दो। लोभ किस निमित्त से होता है? कालाबाज़ार में लोहा बेचा तो आपको चंदूभाई से कहना है, ''चंदूभाई, बेचो उसमें हर्ज़ नहीं है, वह 'व्यवस्थित' के अधीन है, परंतु अब उसका प्रतिक्रमण कर लो।'' और कहना कि 'दोबारा ऐसा नहीं होना चाहिए।'

पछतावा -प्रतिक्रमण से छूट गए

ये चोरी की न, उसके लिए कोई भगवान को फल देने नहीं आना पड़ेगा। और वह पशुयोनि के लिए तैयारी की है, वह रिजर्वेशन तैयार है वहाँ जाने का। यों मिलावट करो या *अणहक्क* का ले लो, *अणहक्क* का भोग लो, चोरियाँ करो, चालाकी करो, ये सब, वहाँ पर जाना है उसके लिए रिजर्वेशन है। चार पैर और एक पूँछ! वह छोड़ेगा नहीं, इसलिए अभी भी सचेत हो जाओ। अभी भी मैं आपसे विनती कर रहा हूँ, सचेत हो जाओ सभी। अभी भी हमारा कहना सुन लो, सचेत हो जाओ।

अणहक्क का नहीं ले सकते। लिया हो तो पछतावा करो अभी तक का। पछतावे से सबकुछ धुल जाएगा। जब से जाना और पछतावा शुरू हुआ तभी से आप छूट गए। परंतु जिसने पछतावा ही न किया हो, उसकी दुकान चलती ही रहेगी।

हमने इन सबके प्रतिक्रमण किए, उसके बाद यह ज्ञान प्रकट हुआ, वर्ना नहीं होता। लोहा निकाल लिया। फलाना निकाल लिया। नासमझी में क्या नहीं करता व्यक्ति? नासमझी में क्या करता है? वह ऐसा ही समझता है कि यह मेरा हित कर रहा हूँ। अरे भाई, हित तू कर रहा है या कौन कर रहा है, उसका भान नहीं है।

हक का होगा तो दादा की गारन्टी

यानी आपकी नीयत कभी भी मत बिगाड़ना और *अणहक्क* का कभी भी मत लेना। *अणहक्क* का पैसा नहीं हड़पना चाहिए। इस मुंबई शहर में लोग मिलावट नहीं करते न?

प्रश्नकर्ता : व्यापारी करते तो हैं।

दादाश्री : तो कोई पहचान वाला हो, उसे सावधान करना कि 'यह मिलावट करते हो, उसके परिणाम में आपको दो पैर के बजाय चार पैर चाहिए और साथ में पूँछ भी इनाम में चाहिए तो करो और नहीं चाहिए तब भी आपकी मर्जी। नहीं चाहिए तो छोड़ दो, यह सब आप, हमारे दादा ने कहा है। भूखे नहीं मरोगे, उसकी दादा गारन्टी देते हैं'।

भूखे नहीं मरोगे, उसकी हम गारन्टी देते

हैं। हम बॉन्ड भी लिखकर देंगे। कुछ समझना तो चाहिए न? हम किस देश के हैं?

प्रश्नकर्ता : भारत देश के।

दादाश्री : भारत देश के हैं हम। तो अपनी 'क्वालिटी' (गुणवत्ता) क्या है? आर्यप्रजा!

अजागृति से, चोरी करने का भी पता नहीं

आपने कभी भी चोरी-वोरी की है?

प्रश्नकर्ता : नहीं, नहीं।

दादाश्री : कभी भी नहीं? कोई कहता ही नहीं है न! जानते ही नहीं हैं वे बेचारे! सारी चोरियाँ की हैं। ये लोग तो क्यों चोरी नहीं करते, वह जानते हों? ये संडास जाने के लोटे यदि तांबे के हों न, तब भी ले जाएँ पड़ोसी। परंतु ये गेट हैं न, हर जगह गेट लगाएँ हैं न, इन गेट के कारण...

प्रश्नकर्ता : यह पुलिस गेट के कारण सुरक्षित है।

दादाश्री : वर्ना ये तो लूट जाता सबकुछ! वहाँ तक हमला (चोरियाँ) किया है लोगों ने! ये भाई कह रहे हैं न, 'मैंने तो चोरी नहीं की', परंतु वे कहेंगे कैसे? पता ही नहीं है न, किसे चोरी कहा जाता है वह? मुझे तो सबकुछ दिखाई देता है न, तुरंत ही। यह चोरी है और यह सच है।

प्रश्नकर्ता : नहीं दादा, चोरी हो जाती है परंतु पता ही नहीं चलता कि यह चोरी हो गई है ऐसा। यह चोरी हो गई है, ऐसा तो पता ही नहीं चला है इसलिए।

दादाश्री : पता नहीं चलेगा, कैसे पता चलेगा?

दादा के अलावा कौन खुला करें?

हमने भी कॉन्ट्रैक्ट के व्यापार में चोरियाँ की, चालाकी की, सबकुछ किया। क्या नहीं किया होगा? सच्ची बात बता रहा हूँ। आप मेरे घर पर बेंच देखते हों न, मैं जिस बेंच पर बैठता हूँ न, तो लोगों से बताता हूँ, कि 'भाई, यह बेंच भी मैं चोरी करके लाया हूँ। यह चोरी का माल देखो, यह अभी भी मुझे याद है।' इस पर मैं बैठता हूँ तब अच्छी बातें निकलती हैं, ऐसा ये सभी कहते हैं।

तो मेरे घर आते थे न, वहाँ मामा की पोल में, उस समय सभी उपदेश सुनने बैठे हों न, उनसे मैं कहता कि 'भाई, यह बेंच है न, इसे मैं चोरी करके लाया हूँ।' तब कहते हैं, 'यह क्या कह रहे हो? ऐसा नहीं कहना चाहिए।' मैंने कहा, 'भाई, मैं सच कह रहा हूँ।' तब मुझसे कहते हैं, 'ऐसा कैसे कह सकते हैं? मत कहना, दादा। यह आप क्या कह रहे हो? परंतु मैं नहीं कहूँगा तो कौन कहेगा? हिंदुस्तान में ऐसा जो कहे, उसे ले आना, कि मैंने चोरियाँ की थीं। कौन कहेगा? वह कहता है, 'आप मत कहना। मत कहना।' तो कौन कहेगा फिर? वह कहता है, 'आपने ऐसा किया था?' मैंने कहा, 'अरे भाई, किया था तभी तो मैं कह रहा हूँ तुझे, यों ही कहने से मुझे क्या फायदा होगा? जो हकीकत बनी है, वही मैं बता रहा हूँ आपको।'

सभी कहते हैं, 'ऐसा नहीं हो सकता, दादा ऐसा क्यों कह रहे हैं आप? हमें खराब लग रहा है यह।' मैंने कहा, 'आपको खराब लगता है, परंतु मैं चोरी का लाया था, चोरी की ही है न यह बेंच! मैं जानता हूँ न, आप थोड़े ही जानते हो?' मुझसे कहते हैं, 'हम नहीं मानेंगे।' मैंने कहा, 'आपको मनवाने के लिए नहीं कह रहा हूँ, यह तो मैं आपको स्वीकार करना सिखा रहा हूँ।'

महँगा पड़ा और फूलिश बने

तब कहते हैं, 'कैसे? किसके वहाँ से चुरा

लाए?' मैंने कहा, ''ऐसा नहीं, कैसे चोरी की थी, वह मैं आपको समझाता हूँ, कैसे हुआ यह, चोरी कैसे कहेंगे! हमारा कॉन्ट्रैक्ट का व्यापार था, तो वे वन विभाग के साहब थे न, वे कहते हैं, कि 'ये जो मालाबारी लकड़ी की पीढ़ियाँ (बीम) हैं, उसे निकालकर वहाँ स्लैब डालने की सरकार की इच्छा है। और ये पीढ़ियाँ सब मालाबारी सागौन की लकड़ी की हैं और रंगे हुए हैं, यानी सागौन बहुत अच्छा है। तो ये दो पीढ़ियाँ मुझे भिजवा देना और दो आप ले जाना।' तो मुझे यह पसंद आया, 'कि इन साहब ने कहा तो अच्छा हुआ, वे स्लैब के पैसे तो देंगे और ऊपर से ये।' दोनों की पार्टनरशिप। चोरी मुझे करनी है, हाफ पार्ट (आधा भाग) उनका है। करवाने वाले हैं वे। इसमें यह चोरी करवाने वाला कौन है? वे साहब। उन्होंने कहा न, कि 'भाई, ये दो पीढ़ियाँ आप ले जाना और दो मुझे दे देना।' वर्ना हमारी कुछ लेने की नीयत नहीं होती, परंतु उन्होंने कहा और मुझे तो बहुत अच्छा लगा। अंदर यों ठंडक महसूस हुई। उन दिनों मालाबारी माल आना बंद हो गया था।''

इसलिए चोरी की, डाका डाला मैंने और फिर दो उन्हें दे दिए और दो मैंने रखे। और उन्हें छुपाकर लाए थे, वर्ना सरकार पकड़ लेती। उन साहब को भी छुपाकर भिजवाया। और वे पीढ़ियाँ दोनों तरफ से रंगी हुई थी, फर्स्ट क्लास रंग किया हुआ था। ताकि भीतर की शक्ति (मज़बूती) नष्ट न हो। फिर मैंने बढ़ई से कहा, 'बेंच बना देना'। तब कहता है, 'इसे तो आरी से चीरते-चीरते हमारा दम निकल जाएगा, हाथ की आरी से।' मैंने कहा, 'अब भले ज़्यादा खर्च हो जाए, परंतु तू बेंच बना दे न!' तब फिर सब से पहले रंग को छीलना पड़ा और फिर चीरना पड़ा।

इस तरह उस जमाने में इस बेंच को बनवाने में बयालीस रुपये खर्च हुए थे मेरे। यदि मैं इसे खरीदकर लाया होता तो सैंतीस रुपये में इसके जैसा मिल जाता। बल्कि इसमें पाँच रुपये ज़्यादा लग गए। चोरी का माल है और मुझे रोज दर्शन करने पड़ते हैं ऐसे! तो मैंने सोचा, 'यह तो फज़ीहत हो गई। चोरी की, चोरी का भाग उसे दिया, चोरी तो रही और हम जैसे थे वैसे के वैसे रहे।' यानी ऐसी सारी चोरियाँ की थी। मन में ऐसा समझते थे कि यह सस्ते में बन गया, कमा लिए।

ऐसी फूलिशनेस (मूर्खता) की! पूरी जिंदगी कॉन्ट्रैक्ट किया, परंतु यह नहीं आया। चोरी करने गए न, उससे तो अंधे हो गए। उसके बजाय दो पीढ़िये बेच दिए होते न, तो दस-पंद्रह रुपये हाथ में आते। इसे तो इस तरह चीर-चीरकर बढ़ई ने ही सारा खर्च किया। उसका यह बेंच बनवाया और फूलिश (मूर्ख) बने हम। इसलिए मैं कहता हूँ कि 'भाई, यह चोरी का माल है।' बल्कि मुझे अभी मन में अफसोस होता है कि, ऐसे काम मैंने किए हैं!

अपनी चोरी खुली की, ताकि दूसरे ऐसा सीखें

चोरी की और गुनहगार बना। मैंने सोचा, 'यह ऐसा गुनाह? अब दोबारा कभी गुनाह नहीं करना है।' फिर लोगों से कह दिया, 'देखो इस तरह से चोरी का यह बनवाया है।' 'ऐसा मत बोलना, ऐसा नहीं कह सकते आप। आप ज्ञानी पुरुष हैं!' अब वह मुझे समझाता है कि 'ऐसा नहीं कहना चाहिए।' क्या मैं नहीं समझता, 'नहीं कहना चाहिए' ऐसा? मेरी समझ से बाहर था क्या, इसीलिए कहा? अरे, मैं तो तुम्हें सिखाने के लिए कह रहा हूँ, कि जैसे मैं यह स्वीकार कर रहा हूँ, वैसे आप भी स्वीकार करना सीखो।

प्रश्नकर्ता : उदाहरण देकर सीखा रहे हैं आप।

दादाश्री : हाँ, मैं अपनी भूल स्वीकार कर रहा हूँ। मुझे शरम नहीं आती, तो आपको अपने

दोष को स्वीकार करने में क्यों शरम आती है? मैं आपको वह सिखा रहा हूँ। मैं तो अपना खुला कह रहा हूँ, परंतु तू सीख ले, भाई। ऐसा कुछ किया हो तो कह दे खुला। मैं क्यों कह रहा हूँ? ताकि आपका मन खुला हो जाए इसलिए कह रहा हूँ।

मैं ऐसा कह रहा हूँ तो आपको हिम्मत आएगी या नहीं आएगी? आपमें इस तरह तो हिम्मत आएगी न, कि 'दादा कह रहे हैं न, तो अब मुझे भी अपनी चोरियाँ कह देने में क्या हर्ज़ है?' थोड़ी हिम्मत आएगी या नहीं आएगी?

प्रश्नकर्ता : हाँ, आएगी, आ रही है।

ओपन टू स्काई, नो सीक्रिसि

दादाश्री : आपको आज आएगी हिम्मत? सुना है न, इसलिए थोड़ी हिम्मत आएगी। वर्ना, सुना ही न हो तो? सभी ने ढँककर (गुप्त) रखा है जबकि ये दादाश्री ने तो 'ओपन टू स्काई' रखा है। एक मिनट भी किसी प्रकार की सीक्रिसि (गुप्त बात) नहीं रखी! वर्ल्ड में सिर्फ एक ही ऐसे पुरुष हैं कि जिनकी सीक्रिसि नहीं है! बाकी सभी लोग सीक्रिसि वाले हैं। सीक्रिसि होती है कि नहीं होती?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी। परंतु दादा, आप तो इस स्टेज पर हैं तो खुला कर सकते हैं, हम कैसे कर सकते हैं?

दादाश्री : अरे, मैं कह रहा हूँ तो हिम्मत तो आएगी या नहीं आएगी? आपमें हिम्मत आए इसीलिए तो कह रहा हूँ। मेरी कोई इज्जत नहीं जाएगी। मेरी इज्जत तो जा ही चुकी है, परंतु तेरी इज्जत जाए, ऐसा कुछ खोज लें। मेरी तो जा चुकी है, इसलिए उसके जाने के बाद भय नहीं रहता न!

प्रश्नकर्ता : फिर भय नहीं रहता।

दादाश्री : फिर सच्चा रो पाएँगे या नहीं रो पाएँगे?

प्रश्नकर्ता : रो पाएँगे।

दादाश्री : मैं तुम्हें सिखाने के लिए यह कह रहा हूँ, कि तुम ऐसा कहो और बताओ। कभी ऐसा कुछ किया हो न, तो बाहर कह दो, खुला कर दो, तो हल्के हो जाओगे। वर्ना नहीं हो पाओगे। ऐसा कह-कहकर मैं हल्का हो गया हूँ।

'यह चोरी का लाया हूँ', ऐसा कहा तो मेरा यहाँ हल्का हो गया न, क्या?

प्रश्नकर्ता : हाँ। दादा, यह आपका सुनकर मुझे सबकुछ याद आ रहा है कि मैंने बहुत चोरी का इकट्ठा किया है।

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं। इकट्ठा किया है तो याद आए तो प्रतिक्रमण करना। इसमें हर्ज़ क्या है? और भय न लगे तो मुझे लिखकर देना, तो मैं धो दूँगा आपका।

खुला करने से बंध जाए मन

यह मेरा खुला कर रहा हूँ, इसलिए आपको हिम्मत आएगी, कि 'दादा जैसे यदि ऐसा खुला कर देते हैं, तो हमें क्यों नहीं करना चाहिए?' यह खुला करने से आपका मन बंध जाएगा। मेरा मन तो बहुत कुछ बंध चुका है पहले, क्योंकि जहाँ देखो वहाँ खुला कर देता हूँ न, इसलिए मेरा मन कहता है, 'इन भोले व्यक्ति के पास अब कुछ नहीं करना है हमें!' मैंने खोजबीन की थी, 'मैंने सोचा, यह रास्ता बहुत अच्छा है।' तब मन कहता है, 'इन भोले व्यक्ति से हमें कुछ उल्टा काम नहीं करवाना है। ये तो खुला कर देते हैं, जहाँ देखो वहाँ। ये तो कह देंगे, फिर हम क्या करेंगे?' ऐसा होता है। वह मन चुप हो जाता है अपने आप। आपको समझ में आया, मैं क्या कहना चाहता हूँ वह?

प्रश्नकर्ता : लेकिन चुप हो जाने के बाद फिर क्या होता है?

दादाश्री : हम गुप्त काम करते हैं न, इसलिए उसकी चालबाजी जारी रहती है। खुली करें न, तो चालबाजी बंद कर देगा।

यदि सबकुछ खुला करें न, तो आपके वश हो जाएगा। 'चोरी करके आया हूँ भाई, अब क्या हो सकता है?' ऐसा कहना। तो मन समझ जाएगा कि 'अब, इनके साथ नहीं रह सकते, दूसरी जगह चलें।' यों घर बदल देगा फिर वह। यह रास्ता अच्छा है न? बहुत अच्छा रास्ता है!

पोल खुली करने से मन ठिकाने पर रहे

कपट को खुला कर देने से तो मन बंध जाता है। अतः खुला कर देने से मन को वश कर सकते हैं। यह एक गजब का वाक्य है!

प्रश्नकर्ता : बहुत अच्छा है। एक्सेप्ट कर लेना चाहिए इस तरह, जो कुछ भी गलत किया हो वह।

दादाश्री : मैं सबकुछ एक्सेप्ट कर लेता था। जो भी भूल होती थी न, वह किसी से कह देता था। कर्ज हो गया हो न, तब भी कह देता था, 'कर्ज बढ़ गया है मेरा तो। तुझे उधार देना हो तो देना और नहीं देना हो तो मत देना।'

प्रश्नकर्ता : सच बता देना चाहिए।

दादाश्री : हाँ, वह पोल खुली कर देनी चाहिए। मन में उलझन मत बढ़ाना। मन तो क्या करता है? उसका यदि पोषण करते रहें न, तो मन तो गलत रास्ते पर ले जाता है। जबकि मैं तो कह देता हूँ कि 'यह भी चोरी की है', तो मन भीतर उछलकूद कर बैठता है कि 'मेरा खुला कर देते हो?' तो भाई, 'तेरा खुला नहीं करें, तो क्या तेरी संगत करें? तेरी संगत से तो मेरी यह दशा हो गई है!' खुला करना अच्छा है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : तो बस तुम बोलना, तो तुम्हारा मन ठिकाने आएगा। मेरा ठिकाने आया इसलिए तो मैं यह बात कर सकता हूँ। कब बोल सकता है व्यक्ति? अतः आप अपनी चोरी का एक्सेप्ट कर लेना, तो आपका मन निर्मल हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : वह बात बिल्कुल सही है!

अलौकिक इज्जत जिसकी सीमा नहीं

दादाश्री : जितनी चोरियाँ मैंने की हैं, वे सारी खुली कर दी हैं। हम तो तटस्थ दृष्टि से देखते हैं और लोगों को खुला कह देते हैं हम, जितनी हमारी भूलें हुई हैं, वे सारी खुली कह देते हैं। जबकि मैं कहता भी ज़रूर था कि 'भाई, (यह हमारी) खुली निर्बलता है।' मैंने तो अपनी सारी निर्बलता ज़ाहिर कर दी थी। वास्तव में एक्ज़ेक्ट जो हुआ हो वही हम कह देते थे। फिर झूठ नहीं बोलते थे, दिखावा नहीं करना। मन-वचन-काया से बिल्कुल सच, साफ-साफ। जो हो गया है, वह खुला ही। इसलिए मेरा मन दूसरा कुछ खराब करने से बच ही जाता था। क्योंकि 'ये कह देते हैं। भोले व्यक्ति हैं न, कह देंगे', ऐसा कहता है। मन भी ऐसा जानता है कि ये भोले हैं। ओपन (खुला) ही कह देते थे। क्योंकि इज्जत किसकी जाएगी? है ही कहाँ इज्जत? इज्जत नहीं है, इसलिए तो कपड़े पहनकर इज्जत रखना चाहते हैं। और कपड़ा भी यदि फट गया हो न, तो सिलवा देते हैं। अरे भाई, इज्जत जाने दे न! तब कहते हैं, 'नहीं, सिलवा दो न, इज्जत बनी रहेगी।' सिले हुए कपड़े में इज्जत रहती है उसकी। इज्जत तो, नंगे घूमें तो भी इज्जत नहीं जाती। उनकी खुशबू आती है इज्जतदार की! यह बदबू आती है न, इसका क्या करना है? वह इज्जत ऐसी कैसी है कि जो चली जाती है?

यह तो हमारा आपसे इसलिए कहते हैं, ताकि आपके दरवाजे खुल जाएँ। हमारी तो इज्जत जा ही

चुकी है, तो फिर कहाँ इज्जत ढँकने जाएँ? हमारी तो लौकिक इज्जत जा चुकी है, परंतु अलौकिक इज्जत अपार है!

गुप्त, वह पर्दा है भगवान के साथ

ऐसी चोरियाँ बहुत की थीं, परंतु सारी स्वीकार कर लेता हूँ। फिर मन डरता रहता है मुझसे। कुछ भी उल्टा-सीधा करना हो न, तो डरता रहता है। मुझे शंका की नजर से ही देखता रहता है, 'कुछ कह देंगे तो, कह देंगे तो? इसलिए यहाँ पर कुछ नहीं करना है' ऐसा कहता है। मन को मुझ पर बहुत शंका होती है, 'ये तो कह देंगे, ओपन कर देंगे।' और इज्जत तो मन की जाएगी। मन को बहुत डर लगता है! 'ये नहीं कहे तो बहुत अच्छा, नहीं कहे तो बहुत अच्छा।' परंतु मैं कह देता हूँ सबकुछ। इसलिए भीतर मन पकड़ में आ गया, कहता है 'ये भोले व्यक्ति हैं। हमें तो अब कुछ भी नहीं करना है।' मन क्या कहने लगा? फिर मन चोरी करने से डरेगा या नहीं डरेगा?

प्रश्नकर्ता : जरूर डरेगा, डरेगा ही।

दादाश्री : इसलिए फिर सबकुछ कह दिया। 'यह भी चोरी का है, यह भी चोरी का, यह भी चोरी का।' इसलिए मन पकड़ में आ गया। उसके बाद चोरी करता ही नहीं है। हम कहते हैं फिर भी नहीं करता। ले, कर न, कर! उसकी इज्जत चली जाएगी, तुरंत! जबकि मैं तो तेरी इज्जत ही खत्म करना चाहता हूँ! 'आ जा तू! तू है और मैं हूँ! मैं वीतरागी बेल हूँ! मेरी बेल ही वीतरागी है!' तो वह (मन) चला गया और फिर इसे निकाला। भीतर भूत बैठे हुए हैं, गुप्त। किससे गुप्त? अरे, वह क्या गुप्त रख रहा है? इसीलिए तो भीतर 'आड़ी त्राटी कपट की, तांसे दिसत नाहि।'

'मैं जानूँ हरि दूर हय, हरि बसे हृदय माहीं।
आडी त्राटी कपट की, तांसे दिसत नाहि।'

– कबीर जी

पर्दा डाला है ऊपर से और उस पर फिर डामर लगाता है। भगवान देख न लें! क्या इज्जत की धज्जियाँ उड़ा दी! और फिर ये परेशानी और चिंता, तो इस तरह क्या जीवन जिया जाता होगा? मुझसे नहीं जिया गया, तभी तो मैंने ये खोजबीन की। इसके पीछे पड़ा। बाकी कोई दुःख नहीं था।

स्वीकार करने में बहादूर रहो

अतः आपको किसी भी टाइम पर, जहाँ इज्जत जाए, वहाँ सिर्फ इज्जत नहीं, बेइज्जती हो जाए तब भी स्वीकार कर लेना चाहिए। स्वीकार करने में बहादूर रहना चाहिए।

कभी भी कोई भी चोरी हो गई हो न, और आप किसी को कह दोगे न, तो आपका मन क्या कहेगा? 'चंदूभाई भोले व्यक्ति हैं इसलिए हमें यहाँ नहीं रहना है, हम कहीं और चलें।' क्या कहता हैं? आपको कैसा लग रहा है?

प्रश्नकर्ता : सही है, सच बात है।

दादाश्री : जो कोई भी खुला कर देता है न, तो उसका मन वहाँ पर समझ जाता है कि यह घर भोला है, हमें यहाँ नहीं रहने जैसा है। जबकि जिस घर में गुप्त रखते हैं वहाँ पर ही वह मुकाम करता है। डॉक्टर साहब आपका क्या मत है? हमारा तो यह है।

प्रश्नकर्ता : सही है, कन्फेशन इज़ बेस्ट (स्वीकारना वह उत्तम है), दादा।

दादाश्री : अतः वस्तुस्थिति में यह उपाय है।

गुनाह खुला करते ही मन वश

दादा के पास जाकर बात खुली कर दें न,

तो आपका मन खड़ा ही नहीं होगा फिर। दादा के पास कबूल किया न इसलिए मन शांत हो जाता है, चुप हो जाता है।

अभी एक भाई ने चोरी की, फिर हम से कह दिया, तो उसका मन क्या करेगा दोबारा चोरी करने के लिए? दोबारा चोरी करने के लिए मना करेगा। फिर मन की हेल्प नहीं मिलेगी। मन तो क्या कहता है कि किसी से कहना मत और कहोगे तो दोबारा आपका काम नहीं करूँगा।

अत: 'गुप्तता को खुली कर दो', हमारा साइन्स ऐसा कहता है। आपके भीतर जो गुप्त भाव हैं, उन सब को खुला कर दो। बोझ कम कर दो। कब तक रखे रहोगे? अर्थी में जाओगे तब भी बोझ रखोगे क्या? गुप्तता रहती है या नहीं लोगों की? आप क्या कहते हो?

प्रश्नकर्ता : बल्कि आपने कहा है न, कि मन को कड़वा पिलाए तब उससे अलग रहना चाहिए। ऐसे पुरुषार्थ में ही रहना चाहिए।

दादाश्री : 'वह' कड़वा पीता है तब हम यों ताली बजाते हैं, 'हाँ, अब ठिकाने पर आया! उसके बिना आप ठिकाने आओ ऐसे नहीं थे!'

प्रश्नकर्ता : ऐसा साथ में बोलना पड़ता है अंदर?

दादाश्री : ऐसा बोले कि आगे बढ़े। फिर दु:ख नहीं रहता, दु:ख का असर नहीं रहता। 'बहुत रौब जमाते थे न, लो न, स्वाद लो!'

प्रश्नकर्ता : ऐसा बोलना है। ऐसा बोलने से क्या इफेक्ट होता है अंदर?

दादाश्री : बोलने से अंदर सबकुछ शांत हो जाता है कि अब हमारे हाथ से लगाम चली गई। मन-वन सब शांत हो जाता है। मन समझ जाता है, जिसे छुपा रखना था उसे खुला कर दिया। बेइज्जती हो जाएगी अब। यह तो छुपा रखना था, गुप्त रखना था, वह सबकुछ ये खुला कर देते हैं। आपको पहले कहना पड़ेगा कि खुला कर दूँगा, भाई। तुझे जो गलत करना है वह कर। तूने चोरी की तो कह दूँगा कि तू चोरी करता है। वह दोबारा नहीं करेगा ऐसा कह देंगे तो, परंतु लोग छुपाते हैं, नहीं?

दोबारा गुनाह करने का मन हो न, तब ओपन करने से मन शांत हो जाता है। वह समझ जाता है, कि अब इस व्यक्ति के यहाँ नहीं रह सकते। मन क्या कहता है? जिस तरह खुला कर देते हैं, अब यहाँ तो हम नहीं रह सकते।' इसलिए दूसरी जगह चला जाता है। तो तू क्या करेगा फिर? दूसरी जगह चला जाएगा तो चलेगा? क्योंकि खुला कर देते हैं इसलिए फिर मन नहीं रहता। मन उकता जाता है कि 'यह कैसा व्यक्ति है! मुझे बुलाकर दगा दिया।' जिसे गुप्त रखना था, उसे खुला कर दिया, ऐसा कहता है। तुम्हें गुप्त रखने का बहुत शौक है न?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : ओपन कर देता है क्या? तो अच्छा है। मन वश करना हो तो स्वीकार करने से होता है। हर एक बाबत में अपनी निर्बलता को स्वीकार कर लो न, तो मन वश हो जाता है, वर्ना मन वश नहीं होता। फिर मन बेलगाम हो जाता है। मन कहता है, पसंदीदा घर है यह!

आप अपनी चोरी की खोजबीन करना

तो उन सभी महात्माओं को समझाया, कि 'यह मैं ही चोरी के माल (बेंच) पर बैठता हूँ। अत: आपकी चोरियों की खोजबीन करना', मैंने कहा। मैंने तो अपनी खोजबीन करके सबको धो डाला है। क्योंकि मैं तो अपनी खोजबीन करके, आपके सामने आलोचना कर देता हूँ और यों

सबको धो डाला है, कि ''भाई, इसकी-इसकी चोरी की थीं।'' क्योंकि मुझे छुपाना पसंद ही नहीं था, जो भी हो, वह साफ कह देता था। इसलिए मैंने कहा, 'भाई, यह चोरी का माल है।' अन्य कोई चोरी नहीं की थी, ज़्यादा बड़ी। पहले बहुत चोरियाँ की थी सिमेन्ट की, सरकारी काम का सिमेन्ट निकाल लेते थे। अरे, तो क्या वे सब चोरियाँ नहीं कही जाएगी? आपको बताते हैं तब मन में ऐसा होता है कि अरेरे! ऐसा! परंतु वह तो सब धो डाला है, बहुत बार धो डाला है। कुछ भी करने का बाकी नहीं रखा। लेकिन ये सब धो डाला न, तो उसके बाद उज़ाला हो गया। हमें धोना आता है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, वही मुख्य बात है।

दादाश्री : आपका भी वाशिंग कर (धो) दूँगा न! और उस वाशिंग मशीन में, धोना आता है।

कभी कुछ भी गलत हो गया हो, आपने चोरी की हो, यों स्थूल चोरी नहीं करते आप, जिसे पुलिस वाला पकड़ लें, ऐसी चोरी नहीं करते, परंतु पुलिस वाला न पकड़े, ऐसी चोरियाँ तो हजारों हो रही हैं, इन उच्च जातियों में। पुलिस वाला न पकड़े, ऐसी बुद्धि से चोरियाँ की, बुद्धि से और मन से। वे चोरियाँ हमें कह देनी है कि मैंने ये चोरी की हैं। यानी अभी तक किए गए कामों को देखकर, याद कर-करके सब के प्रतिक्रमण करना है। गलत हुआ हो न? ज्ञानियों से हुआ है, तो अन्य लोगों का क्या सामर्थ्य है इस काल में?

नहीं करो संकोच, अपने दोष खुले करने में

इस दुनिया में 'मैं गलत हूँ', ऐसा कौन कहेगा? जो बिल्कुल सही हैं, वही कहेगा। बाकी तो सब अन्डरग्राउन्ड (छिपाकर), गुप्त ही रखते हैं। हम पूछें कि, 'साहब, कभी मन से भी चोरी की थी?' तब कहते हैं, 'नहीं भाई, ऐसा कुछ भी नहीं।' जबकि हम तो कह देते हैं कि, 'ये जिस पर हम बैठे हैं न, वह बेंच चोरी करके लाए थे।' हम क्यों कहते हैं? ताकि आपको हिम्मत आए, आप दूसरों से कह सको कि 'मैंने यह चोरी की थी।' इस तरह खुला करना आ जाए न! उससे हृदय खुला हो जाता है, हल्का हो जाता है। कोई स्वीकार ही नहीं करता न! क्यों स्वीकार नहीं करते होंगे? ये ज़रा मुट्ठी में (इज्जत) है न, वह खुली हो जाएगी, बाहर आ जाएगी। जबकि है ही कहाँ वह? दिखा तो सही, इस मुट्ठी में क्या है वह? 'खुली हो जाएगी' कहता है, तो क्या है मुट्ठी में? बड़े (इज्जत वाले) आए!

प्रश्नकर्ता : दादा, आप कहते हैं कि मुट्ठी में कुछ भी नहीं है लेकिन लोग तो ऐसा ही मानते हैं कि इसमें ही है सबकुछ।

दादाश्री : दूसरा कोई बाप भी नहीं मानता, सिर्फ खुद ने अपने मन में मान रखा है, बस इतना ही है। कोई पूछता है? गलत गड़बड़-घोटाला चलता होगा? इसलिए हम कहते हैं कि 'यह बेंच चोरी करके लाए हैं।' क्यों? आपको हिम्मत आए इसलिए। आपको लगे कि दादा कहते हैं तो हमें भी ऐसा कहना है। यों करते-करते सबकुछ ठीक हो जाएगा। अपने दोष बताने में, कहने में क्या हर्ज़ है? ओपन टू स्काई (खुला) कर दो न! हर्ज़ क्या है? जल्दी से बिक जाएगा न, माल आपका! जिसे बेच देना है, उसे अब फिर से स्टॉक में दबाते रहें। ऐसे कब तक दबाना है? ऑन ऑक्शन (नीलामी) करें तब फिर क्या होगा? कब तक रखे रहना है आपको? एक बार बेच दिया तो निबेड़ा आ जाता है। बेचना नहीं चाहिए?

प्रश्नकर्ता : बेचना चाहिए।

दादाश्री : कभी न कभी तो यह माल दुकान में से निकालना ही पड़ेगा न, दुकान खाली करना शुरू हो गया, इसलिए!

अत: छोड़ देना है। अब आपके हाथ में लगाम आ गई। इसलिए अब हर्ज़ नहीं रहा। आपको जो लेना है, वह ले जाओ, कहना अब। पतंग की डोर आपके हाथ में आ गई। पलटी खाए तो खींच लेना, तुरंत ठीक हो जाएगी जबकि डोर नहीं थी तब तक पलटी खाती तो? शोर मचाने से कुछ मिलेगा क्या?

ज्ञानी को देखने से हिम्मत आए खुला करने की

यह सब समझने की ज़रूरत है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, दादाजी।

दादाश्री : एक भी शास्त्र में लिखा है क्या ऐसा? यह तो हमारी चोरी की बात कहते हैं, तब तो सभी खुले होते हैं। अरे, जब ज्ञानी पुरुष अपनी चोरी की बात कहते हैं न, तब हिम्मत आती है! नहीं आती? हिम्मत आई क्या थोड़ी?

प्रश्नकर्ता : हाँ, हाँ।

दादाश्री : हम तो सब कह देते हैं। जब जैसा समय आता है न, तब सब कह देते हैं। क्योंकि हमें अन्य कुछ लेना-देना ही नहीं रहा न! हमारा उनसे किसी भी तरह का कुछ लेना-देना नहीं रहा अब। हम उनका हिसाब सारा चुका देना चाहते हैं, ए.एम.पटेल का। जो है वह, परंतु व्यक्ति अच्छे हैं, सामान्यत: अच्छे हैं! इनके साथ रहने में हर्ज़ नहीं है।

मुझसे एक व्यक्ति ने पूछा, 'ए.एम.पटेल कितने अच्छे हैं?' मैंने कहा, 'आफ्टर ऑल, ही इज़ ए गुड मैन' (वे अच्छे व्यक्ति हैं)। आफ्टर ऑल, यानी इन सब चीजों के होने के बावजूद भी, ऐसे व्यक्ति मिलना मुश्किल है।

नीरू माँ : 'फर्स्ट ऑफ ऑल', दादा। फर्स्ट ऑफ ऑल गुड मैन!

दादाश्री : आफ्टर ऑल, ही इज़ ए गुड मैन', कहा।

मोक्ष में जाने से कौन रोकता है?

हमने बेंच की चोरी के उस समय प्रतिक्रमण किए थे उसी तरह आप पिछला देखकर प्रतिक्रमण करना, तो साफ हो जाएगा। बेंच की बात क्यों कही, सामने वाले को प्रतिक्रमण सिखाने के लिए। और खुला करने से हल्के हो जाओगे और छिपाया तो गया, लेयर (आवरण) पर लेयर चढ़ेंगे। इसलिए गलत हो जाए तो दो लोगों से कह देना, उससे मन पकड़ में आ जाएगा और मन सीधा रहेगा, वर्ना लेयर पर लेयर चढ़ते जाएँगे।

तो अब हम आलोचना-प्रतिक्रमण करते हैं न, इसी तरह प्रतिक्रमण करते रहना सभी, वर्ना वही मोक्ष में जाने से रोकते हैं। क्या रोकता है? सही आलोचना नहीं की व्यक्ति ने, वही मोक्ष में जाने से रोकती है। गुनाह हो जाए उसका हर्ज़ नहीं है, आलोचना न करने से हर्ज़ है, दोष है।

अत: मेरे पास अपने सभी महात्मा, स्त्री-पुरुष ऐसी सच्ची आलोचना करते हैं, कि वर्ल्ड में कभी भी नहीं हुआ हो! स्त्रियाँ अपने दोष की अंतिम तौर पर आलोचना करती हैं। क्या-क्या गुनाह किए हैं, वह सब विस्तारपूर्वक! कह देने से उनका कल्याण हो जाता है! आलोचना हो जाने से कल्याण हो जाता है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, हो जाता है।

खुला करना, वह अंतिम डेवेलपमेन्ट

गुप्त जो हैं न, गुप्तता... सीक्रिसि, वह जितनी कम हो सके उतनी करो। कभी न कभी सीक्रिसि ओपन टू स्काई करनी पड़ेगी, इतना *लक्ष* में रखना है।

कभी न कभी ओपन टू स्काई करनी ही

पड़ेगी न, तो पहले से थोड़ा-थोड़ा अमल में लेते जाएँ। मुझमें कुछ ऐसे ही नहीं आई। धीरे, धीरे, धीरे स्टेप बाय स्टेप! ऐसे ही तो आती ही नहीं न! यह तो आसान चीज़ नहीं है न! पूरा का पूरा *पुद्गल* से ही रगड़ा हुआ है! फिर वहाँ कमल जैसे कैसे हो सकता है? तब कहते हैं, 'ज्ञान होने के बाद कमल जैसे हो सकता है।' और उसके बाद ही ज़रा सा पानी चिपका हो वह भी उड़ जाता है।

प्रश्नकर्ता : मेक्यावेली नाम का पश्चिम का एक बड़ा लेखक है, तत्त्वज्ञान का। वह ऐसा कहता है, कि गुप्त बात किसी से करनी ही नहीं चाहिए।

दादाश्री : वह तो सही कहता है। बेचारे, गुप्तता से तो बल्कि पकड़ा देंगे लोग। अत: गुप्त बात कोई (खुली) करता ही नहीं न! लोग तो अक्लमंद हैं। उसे यह कहने की ज़रूरत ही नहीं थी! वह तो ऐसे ही शोर मचाता है, वह तो उसके देश के लिए ज़रूरी है। अपने देश में तो ऐसा कहते भी नहीं हैं। अपने यहाँ छोटा बच्चा हो वह भी नहीं कहता।

प्रश्नकर्ता : भगवान कहते हैं कि दुश्मन से भी गुप्त बात कह देनी चाहिए। कुछ भी गुप्त रखना ही नहीं चाहिए।

दादाश्री : वह डेवेलपमेन्ट है। अंतिम डेवेलपमेन्ट हो जाने के बाद ही हम गुप्त सबकुछ खुला करते हैं न! खुला करना, वह अंतिम डेवेलपमेन्ट है। तब तक कौन सा डेवेलपमेन्ट है? 'गुप्त नहीं कहना चाहिए', वह डेवेलपमेन्ट है। इतना सा आठ साल का बच्चा हो न, वह भी चार आने दबा दिए हों, तो फिर वह अपने जेब में रखेगा परंतु हमसे कहेगा ही नहीं। बहुत पक्का होता है! उस लेखक को ऐसा बोलने की ज़रूरत नहीं है। वह तो उसके देश के लिए बोलना पड़ेगा। इस देश के लिए बोलना पड़ेगा?

अपने लोग परमात्मा को मानते तो हैं, नहीं? और गुप्त काम भी करते हैं, नहीं? जो परमात्मा तेरी सभी क्रियाओं को जानते हैं, उनसे गुप्त कैसे रख सकते हैं? भगवान को पहचानना है तो फिर गुप्त काम नहीं करने चाहिए। गुप्त काम करते हैं, उन्हें सुधारने करने के लिए क्या करना चाहिए? काम को खुला कर देना चाहिए ताकि लोकभय चला जाए।

- जय सच्चिदानंद

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सानिध्य में सत्संग कार्यक्रम

वाराणसी

29-31 अगस्त (शनि-सोम) शाम 6 से 8-30 - **सत्संग** और **30 अगस्त** (रवि) शाम 4-30 से 8 - **ज्ञानविधि**

स्थल : रुद्राक्ष कन्वेंशन सेंटर, नगर निगम के पास, सिगरा, वाराणसी. **संपर्क :** 7007270283

अडालज

4 सितम्बर (शुक्र) रात 9-30 से 12-15 - **जन्माष्टमी के अवसर पर विशेष भक्ति कार्यक्रम**

6 सितम्बर (रवि) - **पूज्यश्री के दर्शन का कार्यक्रम** (गुरुपूर्णिमा के दर्शन)

8 से 15 सितम्बर (मंगल से मंगल) - **आप्तवाणी 14 भाग-5 पर सत्संग पारायण**

नोट : आप्तवाणी-14 भाग-5 गुजराती बुक के पेज नंबर 26 से वाचन होगा. (हिन्दी-अंग्रेजी में ट्रान्सलेशन उपलब्ध रहेगा.)

सूचना : रजिस्ट्रेशन करवाना आवश्यक है। रजिस्ट्रेशन की अधिक जानकारी **Akonnect** ऐप पर उपलब्ध है.

आत्मज्ञानी पूज्यश्री दीपकभाई का यू.एस.ए. सत्संग प्रवास जून - जुलाई 2026

शिकागो : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 4 से 8 जुलाई 2026

न्यू जर्सी : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 10 से 12 जुलाई 2026

अगस्त 2026
वर्ष-21 अंक-10
अखंड क्रमांक - 250

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. G-GNR-348/2024-2026
Valid up to 31-12-2026
Licensed to Post Without Pre-payment
No. PMG/NG/036/2024-2026
Valid up to 31-12-2026
Posted at Adalaj Post Office
on 15th of every month.

निष्पक्षपाती दृष्टि होगी, तब अपने दोष दिखाई देंगे

'स्वरूप के ज्ञान' के बिना तो भूल नहीं दिखाई देगी। क्योंकि 'मैं ही चंदूभाई हूँ और मुझ में तो कोई खराबी नहीं है, मैं तो बहुत समझदार हूँ' ऐसा रहता है और 'स्वरूप के ज्ञान' की प्राप्ति के बाद आप निष्पक्षपाती हो गए, मन-वचन-काया पर आपका कोई पक्षपात नहीं रहा। इसलिए अपनी भूलें आपको स्वयं दिखने लगती हैं। जिसे अपनी भूल दिखाई देगी, जिसे प्रति क्षण अपनी भूल दिखाई देगी, वह खुद 'परमात्मा स्वरूप' हो गया! किसी का ज़रा सा भी दोष दिखाई न दे और अपने ही सारे दोष दिखाई दें, तब अपना काम पूरा हुआ कहा जाएगा। इस निर्दोष जगत् में कोई दोषित है ही नहीं, वहाँ पर दोष किसे दे सकते हैं?

- दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner. Printed at Amba Multiprint, Opp. H B Kapadiya New High School, Chhatral - Pratappura Road, At - Chhatral, Tal : Kalol, Dist. Gandhinagar – 382729.